मासिक

# अरफात किरण

रायबरेली

## ख़तरनाक सोच

“जब किसी समाज में ज़ुल्म फैलने लगा हो और पसंदीदा निगाहों से देखा जाने लगा हो, जब ज़ुल्म के लिये ये मेयार बन गया हो कि ज़ालिम कौन है? ज़ालिम की क़ौमियत क्या है? ज़ालिम का फ़िरक़ा क्या है? ज़ालिम की ज़बान क्या है? ज़ालिम किस बिरादरी से संबंध रखता है? तो इन्सानियत के लिये एक बड़ा ख़तरा पैदा हो जाता है। जब इन्सानियत को इस तरह ख़ानों में बाटा जाने लगे और ज़ालिम की भी क़ौमियत देखी जाने लगे, जब उसका मज़हब पूछा जाने लगे, जब ज़ुल्म के नापने और ज़ालिम होने का फ़ैसला करने का ये पैमाना बन जाता है कि वो किस क़ौम, किस फ़िरक़े और किस बिरादरी से संबंध रखता है तो उस वक़्त समाज को कोई ताक़त , कोई ज़हानत , कोई पूंजी और बड़े से बड़ी योजना भी बचा नहीं सकती। ”

हज़रत मौलाना अबुल हसन अली हसनी नदवी रह०

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

AUG 14

₹ 10/-

# हमारा फ़ैसला

हम मुसलमानों ने पक्के इरादे के साथ सोच समझ कर अपने वतन हिन्दुस्तान में रहने का फ़ैसला किया है। हमारे इस फ़ैसले को अल्लाह के इरादे के सिवा और कोई ताक़त नहीं बदल सकती। हमारा ये फ़ैसला किसी कम हिम्मती, मजबूरी या लाचारी की वजह से लिया गया नहीं है, हमने सोच समझ कर फ़ैसला किया है।

हमारा दूसरा फ़ैसला ये है कि (जो अपने अज़्म कत्ईयत में पहले फ़ैसले किसी तरह कम और ग़ैर अहम नहीं है) कि हम इस मुल्क में अपनी पूरी आस्था, दीनी शेआर, क़ानून व शरीअत और अपनी धार्मिक व सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ रहेंगे, हम इनके किसी एक नुक़्ते को छोड़ने के लिये तैयार नहीं।

इस देश के नागरिक की हैसियत से हमें यहां आज़ादी और इज़्ज़त के साथ रहने का पूरा हक़ हासिल है। ये इस देश के लोकतन्त्र और संविधान का भी फ़ैसला है। लेकिन इसका मतलब ये हरगिज़ नहीं कि हम अपनी विशेषतओं, क़ानून व शरीअत, दीनी काम, अपनी आस्था, अपनी भाषा व सभ्यता, इन चीज़ों को छोड़कर जो हमको प्यारे हैं, इस देश में रहें। इस तरह रहने से ये वतन, वतन नहीं बल्कि एक जेलख़ाना बन जाता है, जिसमें मानों पूरी क़ौम को ज़िन्दगी की इज़्ज़तों और लज़्ज़तों से महरूम रख कर सज़ा दी जाती है। हमारा ख़मीर ज़रूर इस मुल्क से तैयार हुआ है और ये मिट्टी हमको बहुत प्यारी है, लेकिन हमारी सभ्यता इब्राहीमी है और मुसलमान जिस देश में रहेगा, उसका वतन चाहे जो देश हो, उसकी सभ्यता इब्राहीमी होगी। हम यहां जिन्दा और बाइज़्ज़त इन्सानों की तरह रहना चाहते हैं। हम इस देश में आज़ाद हैं। इसके निर्माण व उन्नति और संविधान में शरीक हैं। इसलिये इस बात का कोई सवाल नहीं कि हम दूसरे दर्जे के नागरिकों की तरह जीवन बितांए। अपने देश में आज़ादी के साथ ज़िन्दगी गुज़ारना हर व्यक्ति का प्राकृतिक, मानवीय, व्यवहारिक, और क़ानूनी हक़ है और इस हक़ को जब भी छीनने की कोशिश की गयी तो उसके हमेशा गंभीर परिणाम होंगे।

ज़िन्दगी और मौत भी इस्लाम पर होगी, अल्लाह तआला ने मुसलमानों से इस बात की मांग की है कि वो इस्लाम और ईमान पर क़ायम रहने की कोशिश करें, इसी पर अपनी ज़िन्दगी गुज़ारें और जब मौत आये तो इसी दीन पर आये।

---

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी रह०
(जुहद–ए–मुसलसल: २३०)

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

# अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:८ अगस्त २०१४ ई० वर्ष:६

**संरक्षक**: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

**निरीक्षक**
मो० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

**सम्पादक**
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

**सम्पादकीय मण्डल**
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

**मुद्रक**
मो० हसन नदवी

**सह सम्पादक**
मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com

www.abulhasanalinadwi.org

## इस अंक में:

पर्सनल लॉ बोर्ड का महत्व और उसका कार्यक्षेत्र.........२
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

आरक्षण और मुसलमान.................................३
मौलाना सैय्यद मुहम्मद वली रहमानी

इस्लामी अक़ीदा..........................................५
बिलाल अब्दुल हयि नदवी

तयम्मुम के कुछ मसअले.............................७
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

नई नस्ल की गुमराही....................................९
मौलाना मुहम्मद इलियास भटकली नदवी

जिहाद और आतंकवाद में अन्तर.....................११
हाफ़िज़ अब्दुल अज़ीम उमरी

निकाह के अनिवार्य रजिस्ट्रेशन का उपाय...........१३
मौलाना नदीम वाजिदी

मुस्लिम नेतृत्व का अकाल..............................१५
जनाब फय्याज़ कुरैशी

यूनिफ़ार्म सिविल कोड.....................................१८
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

ये है फ़िलिस्तीन...........................................२०
अबुल अब्बास ख़ाँ

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

प्रति अंक 10रू

वार्षिक 100रू०

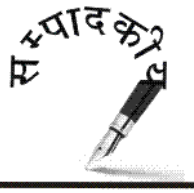

सम्पादकीय

# पर्सनल लॉ बोर्ड का महत्व और उसका कार्यक्षेत्र

● **हज़रत मौलाना सैय्यद राबे हसनी नदवी** (अध्यक्ष आल इण्डिया पर्सनल लॉ बोर्ड)

मानव जीवन को श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों का पाबन्द बनाये रखने और उसको अल्लाह के हुक्मों के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारने के लिये जो हिदायतें इस्लाम और दूसरे धर्मों में दी गयी हैं उनके दरमियान बड़ा फ़र्क़ पाया जाता है। इस्लाम के विपरीत दूसरे धर्मों में जो आदेश दिये गये हैं वो अधिकांश अपने–अपने विचारो के अनुसार आस्था और इबादत की कुछ रस्मों तक सीमित मिलते हैं। लेकिन इस बारे में इस्लाम का मामला बिल्कुल अलग है। इसमें तौहीद के साफ़ अक़ीदे और इबादत के बहुत से पहलुओं पर आधारित व्यवस्थित और व्यापक व्यवस्था रखी गयी है, और उन पर किसी कमी व बेशी के बग़ैर अमल करना लाज़िम क़रार दिया गया है। इसी तरह ज़िन्दगी के दूसरे सभी मामलों के सिलसिले में भी निश्चित आदेश दिये गये हैं। और चूंकि ये एहकाम अल्लाह तआला की तरफ़ से हैं इसीलिये इसमें किसी इन्सानी दख़ल की गुंजाइश नहीं है। ये हुक्म इबादतों से ताल्लकु रखते हों या दूसरे पहलुओं के सिलसिले के हों, ज़ाति ज़िन्दगी के हों या सामाजिक मामलों के हों, या माली मामलों के हों, ये सब इस्लामी शरीअत की रहनुमाई व हिदायतों के तहत रखे गये हैं। इनमें सामाजिक व सामूहिक मामलों के सिलसिले में आदेशों पर अमल कराने की ज़िम्मेदारी शासन पर रखी गयी है और व्यक्तिगत दायरे में आख़िरत में मिलने वाली जज़ा व सज़ा के हवाल से तलक़ीन व नसीहत रखी गयी है।

इस प्रकार मानव जीवन की भलाई के लिये शरीअत के क़ानून ने बड़ा हमागीर, और ज़िन्दगी की ज़रूरतों और तक़ाज़ों पर अमल करने के सिलसिले में अच्छे बुरे के बीच साफ़ फ़र्क़ बताने वाला और फिर उसको कन्ट्रोल करने वाला है। इस्लामी शरीअत के एहकाम के इजरा के सिलसिले में एक ख़ास बात ये रखी गयी है कि हुक्म की ताक़त के ज़रिये ज़ाब्तों को लागू करना सिर्फ़ इस्लाम के मानने वालों के लिये रखा गया है कि ज़िन्दगी के मामले चाहे इन्फ़रादी दायरे के हों चाहे इज्तिमाई ज़िन्दगी के, माली मामलें हों या ख़ानदानी मामले हों, उन सबमें अल्लाह के हुक्म की पाबन्दी ज़रूरी है। इस तरह मुसलमान इस्लामी इक्तेदार के तहत हों या इस्लामी इक्तेदार के बाहर हों, उनके लिये अल्लाह के हुक्म पर अमल करना ज़रूरी होता है। मुसलमान अगर किसी ग़ैरइस्लामी देश में हों तो उनकी मांग ये होती है कि जिस तरह इस्लामी इक्तेदार में ग़ैरमुस्लिम क़ौमों के मज़हबी कामों में ग़ैरमुस्लिम हुकूमत को भी दख़ल नहीं देना चाहिये। ख़ास तौर पर जब देश का क़ानून सेक्यूलर होने के आधार पर किसी के धार्मिक कामों में दख़ल का हक़ नहीं देता, लिहाज़ा क़ानूनी तौर पर भी मुसलमानों का ये हक़ बनता है कि उनके धार्मिक मामलों में सेक्यूलर हुकूमत को दख़ल नहीं देना चाहिये। इस सिलसिले में इस्लामी शरीअत पर अमल करने के जज़्बे को बरक़रार रखने की फ़िक्र करने के लिये आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड की ज़रूरत पड़ी और उसके द्वारा इस देश में धार्मिक अधिकारों की रक्षा के लिये जब ज़रूरत पड़ी कोशिश की गयी और अलहम्दुलिल्लाह कामयाबी हुई। इस तरह हमारे इस देश में आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ संस्था एक ऐसी व्यापक संस्था बन गयी है जो हमारी इस्लामी शरीअत की सुरक्षा का अहम काम अन्जाम देती है। ये मुसलमानों के मुश्तरका इदारा के तौर पर मुसलमानों के मुख़्तलिफ़ मसलकों और दृष्टिकोणों की जमाअतों का पूरा प्रतिनिधित्व करता है और इस तरह इत्तिफ़ाक़ के साथ मुसलमानों के मुश्तरका मज़हबी एहकाम की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी अन्जाम देता है। वो हुक्म जिनमें मसलिकी इख़्तिलाफ़ात हैं या नुक़्ताए नज़र का फ़र्क़ है उनको उन्हीं मसलकों और उन्हीं नुक़्ताए नज़र के साथ मख़सूस रखता है और उनमें दखल नहीं देता क्योंकि वो एहकाम उनके मसलकों का दाख़िली मामला है जिनको देखने और फ़िक्र करने की ज़िम्मेदारी उन्हीं मसलकों के ज़िम्मेदारों की है। इसी तरह इन मामलों में भी जो मुश्तरका मसलिकी मामलात हैं और उनमें मुसलमान और ग़ैर मुसलमान दोनों एक साथ शरीक हैं। उनको भी बोर्ड देश की राजनीतिक, इलाक़ाई व मसलकी सतह की जमाअतों के साथ ख़ास करता है और उनमें दखल देना अपना काम नहीं समझता। इस तरह बोर्ड को मिल्लत के इख़्तिलाफ़ी व जुज़ई मामलों में उलझने से अपने को महफ़ूज़ रखने का फ़ायदा हासिल होता है और बोर्ड की आवाज़ शरीअते इस्लामी के मामलों और उनकी रक्षा के दायरे में हैं और वो इस सिलसिले में मुसलमानों की एक आवाज़ समझे जाते हैं। हमारे कार्यकर्ता अल्हम्दुलिल्लाह बोर्ड के इस निज़ाम व रवैये से इत्तिफ़ाक़ रखते हुए पूरा ताउन देते हैं और इस तरह बोर्ड को अपनी ज़िम्मेदारी अन्जाम देने में मदद मिलती है, ज़रूरत है कि बोर्ड को उसके दायरे में शामिल मुसलमानों के सभी गिरोहों के ज़िम्मेदारों की तरफ़ से ये सहयोग मिलता रहे जो खुद मुसलमानों के मुश्तरक़ा मामलों के लिये तक़वियत का ज़रिया है और इससे इस्लामी उम्मत को अपनी आवाज़ को मज़बूत बनाने का फ़ायदा हासिल होता है।

# आरक्षण और मुसलमान

## MUSLIM RESERVATION

मौलाना मुहम्मद वली रहमानी

भारत में संविधान बनने के इतिहास पर जिनकी नज़र है और संसद की बहसें जिन्हें याद हैं वो जानते हैं कि कानून का निर्माण करने वाली संसद में रिज़र्वेशन पर चर्चा बाद में हुई। इससे पहले दारूलउलूम (बर्तानवी संसद) के एक सदस्य ने भारत के मुसलमानों के भविष्य पर अपनी गहरी चिंता प्रकट की थी। सरदार पटेल ने असेम्बली में इसका जवाब देते हुए कहा था कि हम मुसलमानों को इतना कुछ देंगे कि वो दायें और बायें (पूर्वी पाकिस्तान जो आज बंग्लादेश है और पश्चिमी पाकिस्तान जो वर्तमान पाकिस्तान है) नहीं देखेंगे। असेम्बली का ये बयान रिज़र्वेशन का आधार है; यद्यपि भारत के संविधान में वर्तमान "समानता का अधिकार" के ख़िलाफ़ है; लेकिन कमज़ोर वर्गों को आगे बढ़ाना था और आगे आने वाले ज़माने में "समानता" स्थापित करनी थी। इसलिये समाज में पीछे रह गये लोगों के लिये भारत के संविधान में रिज़र्वेशन रखा गया; ताकि आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक आधार पर पिछड़े लोगों को आने वाले ज़माने में "समानता" का अवसर मिल सके।

जिस समय भारत के संविधान का निर्माण हो रहा था, मुसलमानों के रिज़र्वेशन की बात बड़ी मज़बूती से रखी गयी थी। असेम्बली में इस पर बहस भी हुई थी और पर्दे के पीछे मशवरे भी हुए थे। कुछ नुमायां मुस्लिम नेताओं की पुख़्ता राय ये थी कि क़ानून में मुस्लिम रिज़र्वेशन रखा गया तो देश हिन्दु व मुसलमान के बीच दूरी बनी रहेगी और ये रिज़र्वेशन दोनों वर्गों के बीच हमेशा की खाई बनाए रखेगा। जिससे आपसी फूट बढ़ेगी, दंगे होंगे, ये चीज़ न देश के लिये ठीक होगी न देश की उन्नति के लिये। इसलिये ख़ुद मुस्लिम नेताओं के एक वर्ग ने स्वयं मुस्लिम रिज़र्वेशन का खुल कर विरोध किया और असेम्बली में उन्होंने साफ़ कहा कि मुसलमानों को रिज़र्वेशन की ज़रूरत नहीं है और मुस्लिम रिज़र्वेशन को भारत के क़ानून में जगह नहीं दी गयी।

उन मुस्लिम नेताओं को आने वाले हालात का अंदाज़ा न हो सका। वो समझे, कि समय बीत जायेगा, हिन्दु व मुस्लिम विरोधाभास समाप्त हो जायेंगे और सब मिल कर भारत का निर्माण करते रहेंगे। वो ये भी महसूस नहीं कर सके कि असेम्बली में जो लोग बैठे हैं और नुमायां हैं, वो भी हिन्दु साम्प्रदायिकता और धार्मिक जारहीयत को बढ़ा रहे हैं। उन्हें इस वास्तविकता का शुब्हा भी न था कि कुछ बर्सों के बाद गृह मंत्रायल से ये हिदायत दी जायेगी कि मुसलमानों को सरकारी नौकरी में न रखा जाये। वो ये तो देख रहे थे कि हिन्दु साम्प्रदायिकता को बढ़ाने और भारतीय समाज में दूरी और टकराव पैदा करने के लिये व्यवस्थित रूप से काम किया जा रहा है और "एक वर्ग" इस काम में लगा हुआ है। मगर इस ज़हर को ख़त्म करने और महान भारत के निर्माण के लिये वो कोई दूसरी व्यवस्थित सामाजिक वर्ग की स्थापना नहीं कर सके; शायद उन्होंने ये समझा कि हिन्दु साम्प्रदायिकता को बढ़ाने की व्यवस्थित कोशिश और हर समस्या का समाधान इन्डियन नेशनल कांग्रेस है। कारण ये था कि इस ज़माने में कांग्रेस केवल राजनीतिक पार्टी न थी, उसके विचार दृढ़ थे और वो स्वयं में एक सभ्यता थी; किन्तु आज़ादी के बाद कुछ साल गुज़रते गज़रते कांग्रेस केवल राजनीतिक पार्टी रह गयी और वो राज करने में लग गयी। समय बीतता रहा। धीरे–धीरे कांग्रेस में साम्प्रदायिक तत्व बढ़ते चले गये और अब राजनीति और शासन में नरम साम्प्रदायिकता (Soft Communalism) और गरम साम्प्रदायिकता (Hard Communalism) जैसे शब्दों का प्रयोग हो रहा है। राष्ट्रीय एकता और नेशनल इन्टेगरेशन के नारे भी कमज़ोर पड़ गये हैं और केवल मजलिस में जुगाली के लिये इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक असमानता को ख़त्म करने के लिये उसूली तौर पर क़ानून में "रिज़र्वेशन" मौजूद है; मगर क़ानून के लागू होने के कुछ समय बाद ही "रिज़र्वेशन" को एक हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया गया जिसका दिमाग़ी परिदृष्य अब तक बहुत से लोग नहीं समझ पा रहे हैं।

30 नवम्बर 2010 को अम्बेडकर भवन नई दिल्ली में मुस्लिम रिज़र्वेशन पर जनसभा हो रही थी। कांग्रेस, कम्यूनिस्ट, समाजवादी पार्टियों के प्रथम पंक्ति के पदाधिकारी मौजूद थे। किसी साहब ने ये कह दिया कि धर्म के आधार पर रिज़र्वेशन नहीं हो सकता; ऐसा मौक़ा आता है तो भारत के संविधान का हवाला भी दिया जाता है और कहा जाता है कि रिज़र्वेशन धार्मिक आधार पर ग़ैर क़ानूनी है। मैं इस झूठ को बर्दाश्त न कर सका, जो पिछले पचास साल से भारत वासियों और ख़ास तौर पर मुसलमानों को

पिलाया जा रहा है। मैंने तक़रीर की तो कहा कि भारत के संविधान ने धार्मिक आधार पर रिज़र्वेशन का विरोध नहीं किया है और रिज़र्वेशन के क़ानून को जिस तरह लागू किया गया था, वो साठ साल तक बाक़ी है।

मैने अपनी बात और स्पष्ट की और कहा कि मीरा कुमार स्वयं आई एफ़ एस रहीं हैं, जगजीवन राम जी की बेटी हैं, जो पढ़े–लिखे थे, 1938 में एम एल ए हो चुके थे। लम्बे अर्से तक शासन में रहे, आर्थिक स्थिति बहुत मज़बूत रही, वो शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़े नहीं थे। बड़े–बड़े ब्राहम्ण उनके पैर छूते थे, इसलिये सामाजिक रूप से भी पीछे नहीं रह गये थे, वो और अब उनकी बेटी मीरा कुमार जी ने सहसाराम से सांसदीय चुनाव लड़ा है। सहसाराम की सीट रिज़र्व है। अब अगर मीरा कुमार जी धर्म बदल लें, तो न वो स्पीकर बाक़ी रहेंगी, न संसद की सदस्यता बचेगी, फिर यही मीरा कुमार हिन्दु धर्म अपना लें तो इलेक्शन सहसाराम या किसी दूसरे क्षेत्र से लड़ सकती हैं, जीत सकती हैं; इसलिये रिज़र्वेशन के द्वारा ये संदेश दिया गया कि लाभ प्राप्त करना है तो हिन्दु बनकर रहना होगा। अगर रिज़र्वेश की तह में कहीं धर्म नहीं होता तो मीरा कुमार जी के धर्म परिवर्तन से कोई अन्तर नहीं पड़ना चाहिये; किन्तु ये अन्तर स्पष्ट करता है कि रिज़र्वेशन की मूल आधार धर्म ही रहा है। इस तरह मुसलमानों को रिज़र्वेशन न देने की तह में भी "धर्म" ही है। दलितों को रिज़र्वेशन उनके आर्थिक, सामाजिक, और शैक्षिक पिछड़ेपन के कारण दिया गया है। सच्चर कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार मुसलमानों की हालत दलितों से भी बदतर है। आज़ादी के बाद से अब तक वो लगातार शिक्षा के मैदान में पीछे होते चले जा रहे हैं। उनकी आर्थिक स्थिति चिंतनीय हद तक ख़राब हो चुकी है और सामाजिक रूप से वो नीचे तो गये ही हैं। हाल के बरसों में सोची समझी साज़िश के तहत उन्हें आतंकवादी बताया जा रहा है और सच्ची बात ये है कि आज का मुसलमान "अछूत" है, जिसका अनुभव सड़क, बस, रेल, हवाई जहाज़, हर जगह होता है। अब उन्हें आम तौर पर ग़ैरमुस्लिमों के मकान किराये पर नहीं मिलते। दुकानों के बेचने और ख़रीदने वाले की निगाहें कुछ कहती नज़र आती हैं। सरकारी नौकरियों में शासन ने उन्हें पचास साल पहले से "अछूत जैसा" बनाकर रखा है। रिज़र्वेशन का जो स्तर संविधान में है, उसके लिहाज़ से मुसलमानों को रिज़र्वेशन मिलना चाहिये; मगर नहीं मिल रहा है, केवल धर्म के कारण से। अगर मुसलमानों को रिज़र्वेशन देने से "क़ानून" और "संविधान" रोकता तो श्री रंगनाथ मिश्रा मुसलमानों को आरक्षण देने की सिफ़ारिश नहीं करते। वो स्वयं बहुत बड़े क़ानून के जानकार और सुप्रीम कोर्ट के जज रह चुके हैं। उन्होनें क़ानूनी दांवपेचों और सुप्रीम कोर्ट के फ़ैसलों को सामने रख कर ही अपना ज़हन बनाया होगा और फिर मुसलमानों को रिज़र्वेशन देने की "क़ानूनी सिफ़ारिश" की होगी। ये नहीं भूलना चाहिये कि कर्नाटक में मुसलमानों की सभी बिरादरियों को आरक्षण मिला हुआ है और कर्नाटक के उस समय के मुख्य मंत्री श्री वीरप्पा मोएली अपनी सोच में ईमानदार रहे हैं। उन्होंने मुसलमानों को आरक्षण देते समय ऐसे उपाय किये कि आज तक कर्नाटक के मुसलमान आरक्षण का लाभ उठा रहे हैं और किसी अदालत ने इस पर रोक नहीं लगायी; लेकिन अगर ये ज़िद है कि धर्म के आधार पर आरक्षण नहीं हो सकता तो ये किया जा सकता है कि मुसलमानों की सभी ज़ातों को (दलित से बदतर) मान कर हर एक ज़ात को वो सुविधांए दी जायें, जो आरक्षण के द्वारा दलितों को प्राप्त हैं। याद रहे कि सच्चर कमेटी की रिपोर्ट में पूरी खोज के साथ लिखा है कि मुसलमानों की हालत दलितों से बदतर है। एक क़ानूनी दृष्टिकोण ये भी उठाया जा रहा है कि आरक्षण पचास प्रतिशत के अन्दर ही हो सकता है, इसलिये मुसलमानों को आरक्षण देने में कठिनाई है, यहां भी मामला क़ानून का नहीं है नियत और इरादे का है वरना आरक्षण के पचास प्रतिशत तक पहुंचने में जो गुजांइश अभी बाक़ी है उस गुंजाइश में मुसलमानों को अभी आरक्षण दिया जा सकता है। ये भी किया जा सकता है कि मुसलमानों की कुछ ज़ातों को छोड़ दिया जाये और बक़िया ज़ातों को आरक्षण दे दिया जाये; राहें सब खुली हैं; मगर फिर कहूंगा कि आरक्षण देने में कोई क़ानूनी रुकावट नहीं है और न पचास प्रतिशत से अधिक आरक्षण देना ग़ैरक़ानूनी है। तमिलनाडु में 69 प्रतिशत आरक्षण बर्सों से दिया जा रहा है। वो भी भारत का हिस्सा है वहां भी वही क़ानून है जो बाक़ी भारत में है।

शासन की रिपोर्ट के अनुसार मुसलमानों की तमिलनाडु में आबादी 6–7 प्रतिशत है और आरक्षण 3–5 प्रतिशत है। ऊपर लिखी तफ़सील बताती है कि आरक्षण पचास प्रतिशत से अधिक हो सकता है और सभी मुसलमानों को आरक्षण दिया जा सकता है; जैसा कि रंगनाथ मिश्रा कमीशन की रिपोर्ट है, क़ानून कहीं रूकावट नहीं है; अगर कोई चीज़ रुकावट है तो वो है नियत की खोट और हौसले की कमी।

# इस्लामी अक़ीदा

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

**तौहीद–ए–सिफ़ातः** जिस तरह अल्लाह को तन्हा रब समझना और इबादत के कामों को उसके लिये ख़ास करना ज़रूरी है, जिसको तौहीद–ए–रबूबियत कहते हैं। इसी तरह इसकी सिफ़ात में भी इसको एक व तन्हा समझना तौहीद के लिये ज़रूरी है। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "कोई भी उसके जैसा नहीं" (सूरह शूराः 11) न ज़ात में न सिफ़ात में, उसका इल्म, उसकी क़ुदरत, उसका तसर्रुफ़ और उसके अलावा उसकी सब सिफ़ात उसकी ज़ात की तरह लामहदूद हैं। उसकी ज़ात व सिफ़ात के अलावा सब उसकी मख़लूक़ हैं, जिनकी अल्लाह ने हद क़ायम की है, इसी तरह उनकी सिफ़ात भी महदूद हैं, अल्लाह तआला ने जिस मख़लूक़ को जैसा बनाया उसके हिसाब से उसके अन्दर सिफ़ात रखी हैं, इन्सान सबसे अशरफ़ मख़लूक़ है। उसके अन्दर जो सिफ़ात हैं वो दूसरी मख़लूक़ में नहीं, फिर इन्सानों में अल्लाह तआला ने समझ के एतबार से बड़ा फ़र्क़ रखा है, इसी हिसाब से सिफ़ात भी बहुत अलग–अलग होती हैं, एक समझ जाहिल आदमी की होती है और एक समझ पढ़े–लिखे आदमी की होती है, लेकिन ये सब अल्लाह की दी हुई ज़ाहिरी चीज़ों पर होता है।

**इल्म–ए–ग़ैबः** अल्लाह ने जो हवास दिये हैं उनसे काम लेकर आदमी नतीजा निकालता है, किसी चीज़ को चखता है तो उसके ज़ायक़े का फ़ैसला करता है, देखता है तो रंग समझ में आता है, सूंघता है तो बू की हक़ीक़त मालूम होती है, सुनता है तो आवाज़ बहुत कुछ नतीजा निकालती है, छूता है तो नर्मी–सख़्ती, चिकनेपन या खुदरेपन का एहसास करता है, लेकिन जो चीज़ उसके हवास से बाहर हो उसके बारे में वो कुछ नहीं कह सकता, न हक़ीक़त तक पहुंच सकता है, जो चीज़ समझ में न आ सके, वो ग़ैब कहलाती है। आदमी खुद से किसी भी ग़ैब की बात को नहीं जान सकता है यद्यपि अल्लाह तआला अपने नबियों को बहुत सी बातें बताता है, बस जितनी बातें अल्लाह तबारक व तआला उनको बता देता है, उतनी बातें वो जान लेते हैं, अपनी तरफ़ से वो एक बात भी नहीं बता सकते हैं।

आख़िरी नबी और नबियों के सरदार हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा स0अ0 को भी अल्लाह ने ग़ैब की बहुत सी बातें बतायीं, जितनी बातें अल्लाह ने आप स0अ0 को बता दीं, वो उनके इल्म में आ गयीं, उसके अलावा जो ग़ैब की चीज़ें थीं वो आंहज़रत स0अ0 के लिये भी ग़ैब रहीं और उनका इल्म आप स0अ0 को नहीं था। बहुत सी आयतों और हदीसों में इसकी तफ़सील आयी है, अल्लाह तआला फ़रमाते हैं: "कह दीजिये कि आसमानों और ज़मीन में जो लोग भी हैं वो ग़ैब नहीं जानते सिवाए अल्लाह के और वो ये भी नहीं जानते कि वो कब उठाए जायेगें।" (सूरह नमलः 10)

दूसरी आयत में है: "यक़ीनन अल्लाह ही के पास क़यामत का इल्म है और वही बारिश करता है और रहम के अन्दर जो कुछ है उसको जानता है और कोई नहीं जानता कि कल वो क्या करेगा और कोई नहीं जानता कि किस जगह उसकी मौत होगी बिलाशुब्हा अल्लाह ख़ूब जानता पूरी ख़बर रखता है।" (सूरह लुक़मानः 34)

और फ़रमायाः "और ग़ैब की कुन्जिया उसी के पास हैं, वही उनको जानता है।" (सूरह ईनामः 59)

यानि ग़ैब की सब बातें अल्लाह के इल्म में हैं, क़यामत जिसका आना यक़ीनी है, उसके वक़्त का भी किसी को इल्म नहीं, न नबी को, न फ़रिश्ते को, न किसी वली को, न ग़ौस व क़ुतुब को, सरवरे दो आलम स0अ0 से उसका वक़्त पूछा गया, आप स0अ0 ने फ़रमाया कि इसका इल्म सिर्फ़ अल्लाह को है और आयते शरीफ़ा में है: "वो आपसे क़यामत के बारे में पूछते रहते हैं कि कब इसके बरपा होने का वक़्त है, कह दीजिये कि इसका इल्म तो मेरे रब के पास है, वही अपने वक़्त पर इसको ज़ाहिर कर देगा, आसमानों और ज़मीन पर वो भारी है, अचानक ही वो तुम पर आ जायेगी, वो आपसे ऐसा पूछते हैं कि मानों आप उसकी कुरेद में हैं, कह दीजिए कि इसका पता अल्लाह ही को है, लेकिन अक्सर लोग बेख़बर हैं।"(सूरह आराफ़: 187)

इसी तरह और जो ग़ैब की बातें हैं उनको अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता, जीत हो या हार, सेहत हो या

बीमारी, मरना–जीना हो, अमीरी–ग़रीबी हो और जो भी ग़ैब की बातें है उनको सिर्फ़ अल्लाह जानता है। बदर की जंग के मौक़े पर आंहज़रत स0अ0 पर अजीब कैफ़ियत तारी थी, आप स0अ0 को मालूम नहीं था कि आगे क्या होने वाला है, आप स0अ0 रो–रोकर दुआएं फ़रमा रहे थे फिर अल्लाह ने उनको बताया कि आप ग़म न करें अल्लाह फ़रिश्तों से उनकी मदद करेगा और फ़तेह होगी।

हज़रत आयशा रज़ि0 पर इल्ज़ाम लगाया गया, आप स0अ0 के कई दिन परेशानी में बीते, खोज करते रहे मगर कोई खुली बात सामने नहीं आयी, आख़िर में आयत नाज़िल हुई और उसमें हज़रत आयशा रज़ि0 की बराअत नाज़िल हो गयी और आप स0अ0 की फ़िक्र दूर हुई।

ये अक़ीदा होना चाहिये कि ग़ैब की कुन्जियां सिर्फ़ अल्लाह के पास हैं वो जिसको चाहता है जितना चाहता है बख़्श देता है। बस जो कोई ये दावा करे कि मेरे पास ऐसा इल्म है कि जब चाहूं ग़ैब की बातें मालूम कर लूं और आगे की बातों को मालूम करना मेरे क़ाबू में है। वो बड़ा झूठा है और जो किसी नबी या वली के बारे में ये अक़ीदा रखे वो शिर्क में पड़ जाता है इसलिये कि ये सिर्फ़ अल्लाह की सिफ़त है कोई दूसरा इसमें शरीक नहीं।

कुरआन मजीद में खुद आंहज़रत स0अ0 से कहलवाया गया: "आप बता दीजिये कि मैं अपने लिये कुछ भी फ़ायदे नुक़सान का मालिक नहीं सिवाए उसके जो अल्लाह चाहे और अगर मैं ग़ैब की बात जानता तो बहुत कुछ अच्छी–अच्छी चीज़ें जमा कर लेता, और मुझको तकलीफ़ भी न पहुचंती, तो मैं उन लोगों के लिये डराने वाला और बशारत देने वाला हूं जो मानते हैं।"

(सूरह आराफ़: 188)

ये बात आप स0अ0 से कहलवायी जा रही है जो सब नबियों के सरदार हैं, दुनिया में जिस किसी को बुज़ुर्गी हासिल हुई वो सब आप स0अ0 के ज़रिये हासिल हुई, आप स0अ0 फ़रमाते हैं कि मैं खुद अपने नफ़े नुक़सान का मालिक नही तो दूसरों का क्या कर सकूं और न ग़ैब जानता हूं अगर जानता तो पहले हर काम का अन्जाम मालूम कर लेता अच्छा होता, तो करता, और अगर बुरा अन्जाम होता तो हाथ रोक लेता। ये किसी कि अख़्तियार में नहीं, जो जब चाहे मालूम करे, और जिसको चाहे हिदायत दे ये अल्लाह का काम है, एक आयत में अल्लाह तआला ने खुद अपने पैग़म्बर से फ़रमाया: "आप जिसको चाहें उसको हिदायत नहीं दे सकते, हां अल्लाह जिसको चाहता है हिदायत देता है।" (अलक़सस: 56)

अब नीचे कुछ सही हदीसें नक़ल की जाती हैं जिनमें सराहत से आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमाया कि ग़ैब का इल्म सिर्फ़ अल्लाह को है: "हज़रत रबीअ बिन्त सऊद बिन उफ़रा से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल स0अ0 जब मेरी शादी हुई थी उस वक़्त तशरीफ़ लाये और जिस तरह तुम बैठे हो उस तरह आप स0अ0 तशरीफ़ फ़रमा थे तो कुछ बच्चियां दफ़ बजा बजा कर उन लोगों का तज़किरा करने लगीं जो बदर में शहीद हुए थे, तो उनमें से एक बोली कि हम में एक ऐसे नबी हैं जो कल की बात जानते हैं, आप स0अ0 ने कहा ये बात मत कहो और जो तुम कर रहीं थी वो कहो।" (बुख़ारी)

"हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं कि अगर तुममें से कोई कहे कि रसूलुल्लाह स0अ0 उन पांच चीज़ों को जानते हैं जिनके बारे में अल्लाह फ़रमाता है "अल्लाह की के पास क़यामत का इल्म है" तो बड़ा बोहतान बांधा।"

**नादान दोस्त**

**एक शख़्स के पास एक गधा था। जिस पर वो सवारी करता था। एक रोज़ सवार हुआ तो गधे ने उसे ज़मीन पर पटक दिया। आदमी को बहुत चोट आयी। चोट देखकर गधा संजीदा हो गया और उसे दोबारा अपनी पीठ पर बिठाकर रवाना हुआ। मालिक ख़ामोश हो गया कि देखें वो इसे कहां ले जाता है। गधा उसे अस्पताल ले पहुंचा। मुहल्ले वालों को मालूम हुआ तो उन्होंने इस व्यक्ति को मुबारक बाद दी कि तुम ख़ुशनसीब हो कि तुम्हें बहुत अच्छा गधा मिला है। आदमी ने कहा: हां! गधा तो अच्छा है मगर जहां ले गया था वो मवेशियों का अस्पताल था।**

**ये एक मिसाल है जो बताती है कि इख़लास के साथ अक़्ल मन्दी भी ज़रूरी है। बदक़िस्मती से मौजूदा ज़माने में हमारी क़ौम इसका शिकार बनी हुई है। हर क़ायद क़ौम की इस्लाह के लिये ऐसा तरीक़ा अपनाता है जो क़ौम के मर्ज़ को घटाने के बजाए बढ़ा देता है। छोटी से बात पर लड़कर बड़े नुक़सान को दावत देना, एक मामूली मसले के नाम पर हंगामा करके दूसरे नाक़ाबिले हल मसले खड़े कर लेना, जलसे जुलूस के तमाशों को तारीख़ी बताकर क़ौम की ताक़त का इसमें बर्बाद कर देना, ये सब इसी नादानी की मिसालें हैं।**

# तयम्मुम के कुछ मसले

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

नमाज़ हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है और किसी भी हालत में माफ़ नहीं है और नमाज़ के लिये पाकी शर्त है। पाकी के बग़ैर नमाज़ के बारे में सोचा नहीं जा सकता है। पाकी अस्ल में पानी से हासिल की जाती है। लेकिन कभी पानी मौजूद नहीं होता या पानी मौजूद होने के बावजूद इन्सान मर्ज़ वग़ैरह की वजह से उसके इस्तेमाल पर क़ादिर नहीं होता। ऐसी हालत में पानी के बाद मिट्टी का नम्बर आता है। इसकी इजाज़त ख़ुद कुरआन मजीद में दी गयी है, इरशाद हैः "और अगर तुम मरीज़ हो, या सफ़र पर हो या तुममे से कोई फ़राग़त करके आया है, या तुम बीवियों के पास जा चुके हो, फिर तुम्हें पानी न मिल सके, तो पाक मिट्टी से तयम्मुम कर लो, बिला शुब्हा अल्लाह बहुत माफ़ करने वाला है और निहायत मग़फ़िरत करने वाला है।"

(सूरह निसाः 43)

हदीस शरीफ़ में इसकी मशरूइयत का ज़िक्र करते हुए ये भी इरशाद फ़रमाया कि तयम्मुम उन चीज़ों में से है जो उम्मते मुहम्मदिया की ख़ासियत में से है। पिछली क़ौमों में से किसी को इनसे नहीं नवाज़ा गया। इसीलिये हज़रत जाबिर रज़ि0 से रिवायत है, फ़रमाते हैं कि नबी करीम स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः मुझे पांच ऐसी चीज़ें दी गयीं जिनको मुझसे पहले किसी को नहीं दिया गयाः

1. मेरी मदद एक महीने की दूरी से रअब के ज़रिये की गयी।
2. पूरी ज़मीन को मेरे लिये सजदागाह और पाकी का ज़रिया बनाया गया तो मेरी उम्मत में से जिस शख़्स को भी नमाज़ का वक़्त हो जाये तो उसे चाहिये कि नमाज़ पढ़ ले।
3. मेरे लिये अमवाले ग़नीमत को हलाल कर दिया गया और मुझसे पहले किसी के लिये हलाल नहीं किया गया।
4. मुझे शफ़ाअत से नवाज़ा गया।
5. नबी को ख़ास उस क़ौम में भेजा जाता था जबकि मुझे तमाम लोगों के लिये भेजा गया है। (मुत्तफ़िक़ अलैह)

तयम्मुम करना जायज़ है

तयम्मुम उस वक़्त के लिये है जब किसी को नापाकी हो जाये या वज़ू की ज़रूरत पेश आ जाये और उसे नीचे लिखी ग़रज़ों में से कोई ग़रज़ हो जायेः

1. जब पानी मौजूद न हो या मौजूदा पानी तहारत के लिये नाकाफ़ी हो। मौजूद न होने का मतलब ये है कि न उसके पास पानी है न एक शरई (1.83 किलोमीटर) के अन्दर कहीं मौजूद है। इसीलिये अगर उसको पता है कि 1.83 किलोमीटर के अन्दर पानी मिल जायेगा तो उसके लिये तयम्मुम जायज़ नहीं होगा। (171/1) इस वजह से तयम्मुम की इजाज़त ख़ुद ऊपर ज़िक्र की गयी आयत में है। इसके अलावा हदीस में साफ़ तौर पर इसका ज़िक्र आया है। इसीलिये हज़रत इमरान इब्ने हसीन रज़ि0 फ़रमाते हैं: "हम एक सफ़र में नबी करीम स0अ0 के साथ थे। आप स0अ0 ने लोगों को नमाज़ पढ़ाई, अचानक आप स0अ0 ने देखा कि एक शख़्स अलग–थलग है, आप स0अ0 ने पूछाः नमाज़ से क्या माने है?उसने कहाः मुझे नापाकी हो गयी और पानी है नहीं, तो आप स0अ0 ने फ़रमायाः तुम मिट्टी वग़ैरह को लाज़िम पकड़ो, इसलिये कि वो तुम्हारी किफ़ायत करेगी।" (मुत्तफ़िक़ अलैह) इसी तरह हज़रत अबूज़र रज़ि0 आप स0अ0 से रिवायत करते हैं कि मिट्टी वग़ैहर उस शख़्स के लिये भी पाकी का ज़रिया है जो दसियों साल तक पानी न पाये। (तिरमिज़ी, अबूदाउद, नसई)
2. पानी मौजूद हो, लेकिन उसके इस्तेमाल करने से डर हो कि मर्ज़ बढ़ जायेगा या ठीक होने में देर लगेगी, ये ख़्याल चाहे मरीज़ को अपने तजुर्बे से हो चाहे इसका ग़ालिब गुमान हो, या किसी माहिर मुसलमान डाक्टर ने ये बात कही हो, कभी बीमारी बढ़ने का ख़तरा हरकत से भी हो सकता है यानि पानी तो नुक़सान नहीं करता लेकिन

वज़ू के लिये चलना पड़ेगा, और ये चीज़ें उसके लिये ख़तरे की हों और कोई वज़ू कराने वाला मौजूद न हो तो वो भी तयम्मुम कर सकता है। (शामीः 171/1) बीमारी की वजह से तयम्मुम की इजाज़त ख़ुद कुरआन में दी गयी है। जैसा कि शुरू में ज़िक्र किया गया। इसके अलावा हदीसों में भी इसका ज़िक्र मौजूद है। इसीलिये हज़रत जाबिर रज़ि0 से रिवायत है, फ़रमाते हैंः हम सफ़र पर निकले हममें से एक शख़्स को पत्थर लग गया, जिससे उसके सर में ज़ख़्म हो गया, फिर उस शख़्स को एहतिलाम हो गया तो उसने अपने साथियों से पूछाः क्या तुम लोग मेरे लिये तयम्मुम में कोई रुख़्सत और इजाज़त पाते हो? लोगों ने कहा, जब तुम पानी पर कुदरत रखते हो तो हमें नहीं लगता कि इजाज़त है, इसीलिये उसने ग़ुस्ल कर लिया और उसकी मौत हो गयी, फिर जब हम रसूलुल्लाह स0अ0 के पास आये तो आप स0अ0 को इसकी जानकारी दी गयी तो आप स0अ0 ने फ़रमायाः इसको उन लोगों ने मार डाला, अल्लाह उनसे समझे, जब वो नहीं जानते थे तो पूछा क्यों नहीं, इसलिये कि बीमार की शिफ़ा पोछने में है, उसके लिये तयम्मुम करना ही काफ़ी था।

3. सर्दी सख़्त हो और किसी को नहाने की हाजत हो जाये, पानी गर्म करने का कोई इन्तिज़ाम न हो और ठन्डे पानी से नहाने में जान जाने या अंगों के शल पड़ जाने का ख़तरा होतो नापाक ग़ुस्ल की जगह तयम्मुम कर सकता है। लेकिन मुहद्दिस वज़ू की जगह तयम्मुम नहीं कर सकता है। (172/1) इसीलिये हज़रत अम्र बिन आस रज़ि0 से रिवायत है, फ़रमाते हैं कि एक बहुत ठन्डी रात में मुझे एहतिलाम हो गया और मुझे ख़ौफ़ हुआ कि ग़ुस्ल किया तो हलाक हो जाऊंगा, इसीलिये मैंने तयम्मुम कर लिया, फिर अपने साथियों को फ़ज्र की नमाज़ पढ़ाई, फिर जब हम रसूलुल्लाह स0अ0 के पास आये तो लोगों ने इसका ज़िक्र आप स0अ0 से किया तो आप स0अ0 ने कहाः मुझे अल्लाह तआला का ये इरशाद याद आ गयाः

"अपने आपको क़त्म मत करो, बेशक अल्लाह तआला तुम्हारे ऊपर रहम करने वाला है।" (सूरह निसाः 29)

सो मैंने तयम्मुम किया फिर नमाज़ पढ़ा दी, तो नबी करीम स0अ0 हंस पड़े और आप स0अ0 ने कुछ नहीं कहा।

4. पानी मौजूद हो और इस्तेमाल करने पर कुदरत भी हो लेकिन पानी और उसके बीच सांप दरिन्दा या जानी दुश्मन जैसी कोई चीज़ हायल हो या वो जेल में हो और पानी के पास न जा सकता हो, तो तयम्मुम करके नमाज़ पढ़े, लेकिन जिन सूरतों में बन्दों की रुकावट की वजह से वज़ू या ग़ुस्ल न कर सका तो उन सूरतों में बाद में नमाज़ को दोहराना ज़रूरी है। (172/1)

5. पानी सिर्फ़ पीने के लिये हो और उससे वज़ू या ग़ुस्ल करने पर फ़िलहाल या बाद में अपने लिये या अपने जानवरों के लिये प्यास का ख़ौफ़ हो तब भी तयम्मुम कर सकते हैं। (173/1)

6. पानी को कुअें से निकालने के लिये कोई चीज़ मौजूद न हो। (172/1)

7. हर उस नमाज़ के लिये तयम्मुम करना जायज़ है जिसका कोई बदल नहीं है और वज़ू में हो जाने से उसके छूट जाने का ख़तरा हो, जैसे जनाज़े की नमाज़ बिल्कुल तैयार हो तो तयम्मुम करके पढ़ सकता है, लेकिन ये इजाज़त वली को नहीं है, इसलिये कि वो जनाज़े की नमाज़ में देर कर सकता है। इसी तरह ईद की नमाज़ तैयार हो तो तयम्मुम कर सकता है लेकिन जुमा में ऐसा नहीं कर सकता इसलिये कि ज़ुहर की शक्ल में इसका बदल मौजूद है। (177/1)

नमाज़ का वक़्त इतना तंग हो कि वज़ू करने में नमाज़ क़ज़ा हो सकती है तो एहतियात में है कि तयम्मुम करके नमाज़ पढ़ ले और बाद में वज़ू करके दोहरा ले।

**सही समझ की कमी**

किसी क़ौम के लिये सबसे ज़्यादा ख़तरनाक बात ये है कि वो सही शऊर से ख़ाली हो। एक ऐसी क़ौम जो हर तरह की योग्यताओं और दीनी व दुनियावी दौलतों से मालामाल हो लेकिन उसमें नेक व बद की तमीज़ न हो। वो अपने दोस्त व दुश्मन को पहचानती न हो। पिछले तजुर्बे से फ़ायदा उठाने की उसमें योग्यता न हो। अपने रहनुमाओं का एहतिसाब करने और क़ौमी मुजरिमों को सज़ा देने की उसमें जुर्रत न हो। जो ख़ुदगर्ज़ शासक के मीठे बोल पर हर बार धोखा खाने के लिये तैयार हो। वो अपनी सभी दीनी व दुनियावी सरफ़राज़ियों के बावजूद कभी कामयाब न होगी।

इस वक़्त मिल्लत की एक बड़ी ख़िदमत ये है कि मुसलमानों में सही शऊर पैदा किया जाये। ऐसा शऊर जिससे वो अपने सांस्कृतिक, सामाजिक, सामूहिक और दीनी मसलों व मामलों में एक आक़िल व बालिग़ इन्सान की तरह ग़ौर कर सके और फ़ैसला करने की योग्यता उसमें पैदा हो जाये।

**हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी रह०**

# नई नस्ल की गुमराही

## (भारतीय मुसलमानों की सबसे बड़ी समस्या)

मौलाना मुहम्मद इलियास भटकली नदवी

यूं तो इस समय भारत के मुसलमानों को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत सी समस्याओं का सामना है। लेकिन मुसलमान होने की हैसियत से इस समय जो सबसे बड़ी समस्या सामने है वो उनकी नयी नस्लों में आश्चर्यजनक रूप इस्लाम से हट जाने की सोच का फैलाव है। 30/40 साल से तो खुल कर इस्लाम से बाहर हो जाने वालों की संख्यां में तो कमी आयी है लेकिन इस्लाम छोड़ देने की सोच में तेज़ी से बढ़ोत्तरी होने लगी है। पहले तो आदमी मुसलमान रहत था या ऐलान करके उससे निकल जाता था लेकिन आज मिशनरी स्कूलों की नहूसत से एक नया वर्ग पैदा हो गया है जो देखने में तो पक्का मुसलमान और नमाज़ रोज़े का पाबन्द है लेकिन अपनी सोच के एतबार से वो इस्लाम से बाहर हो चुका है। ग़ैर मुस्लिमों की तरह उसे भी आप स0अ0 की ग्यारह बीवियों पर एतराज़ है, तलाक़ का इस्लामी क़ानून उसकी समझ में नहीं आता, कुरआन में बताये गये विरासत के बंटवारे को वो ज़ुल्म समझता है, इस्लामी सीमाओं को वो वहशियाना काम घोषित करता है। अब सवाल ये है कि क्या कोई मुसलमान इस्लामी क़ानूनों पर एतराज़ करके मुसलमान बाक़ी रह सकता है?

भारत में एक इस्लामी संस्था की ओर से बहुत से मिशनरी स्कूलों को निरीक्षण किया गया तो ये बात सामने आयी कि उनमें खुद ईसाईयों की संख्यां बीस प्रतिशत से अधिक नहीं है, हिन्दु छात्रों की संख्यां दस प्रतिशत के आस पास हैं। बाक़ी सत्तर प्रतिशत छात्र मुसलमान हैं जो ग़रीब घराने से संबंध रखते हैं। मालदार मां–बाप अपने बच्चों को इसलिये यहां दाख़िल कराते हैं कि उनसे कम दर्जों के छात्रों के साथ उनके लड़कों का सरकारी या दूसरे स्कूलों में दाख़िला तौहीन के बराबर है। ऐसे ग़रीब छात्रों की भी बड़ी संख्या मिली जिनके सरपरस्तों ने अपने बच्चों को झूठी नामवरी की धुन में कान्वेन्ट में दाख़िल करा दिया था। पढ़ने वाले बहुत से मुस्लिम छात्रों की दीनी जानकारी का जब पता लगाया गया तो बाइबिल की जानकारी उन्हें कुरआन से ज़्यादा थी। घर में खाली वक़्त में उर्दू पढ़ने वाले छात्रों से अलिफ़, बे, ते से बनने वाले शब्द पूछे गये तो उनकी ज़बान से अलिफ़ से अल्लाह के बजाय इन्जील, मीम से मुहम्मद के बजाय मसीह और क से काबा के बजाय क्लेसा अचानक ही निकला। वो चर्च को बैतुल्लाह, हज़रत ईसा के साथियों को सहाबा और बाइबिल को मुक़द्दस किताब और उसकी इक्तेबासात को आयात समावी कह रहे थे।

ग़रज़ ये कि एशिया में इन मिशनरी स्कूलों ने मुस्लिम छात्रों और नौजवानों की एक बड़ी संख्या ऐसी पैदा कर दी जो बज़ाहिर मुसलमान है और नमाज़ रोज़े की पाबन्द भी है। पहचान पत्र और वोटर लिस्ट में वो अपने को बतौर मुसलमान ही दर्ज करा रहे हैं लेकिन ज़हन और सोच के एतबार से इस्लाम से ख़ारिज हो चुके हैं। हज़रत मौलाना अली मियां रह0 के कथनानुसारः "ये इस्लाम के इतिहास का सबसे ख़तरनाक मोड़ है अगर इस्लाम से हट जाने की इस सोच को रोका नहीं गया तो आने वाली नस्लों में इस्लाम और ईमान के बाक़ी रहने की कोई ज़मानत नहीं है।"

इस्लाम के हक़ में जब इन मिशनरी स्कूलों के ख़तरनाक इरादों से आगाह किया जाता है तो बहुत से लोग ये सवाल करते हैं कि शिक्षा का धर्म से क्या संबंध है?श्रेष्ठ और उच्च शिक्षा किसी से भी प्राप्त की जाये, इसमें क्या ख़राबी है?जी हाँ! अगर कोई मुख़लिस होकर तालीम व तरबियत का काम करे तो कोई बात नहीं! यहां तो इन मिशनरी स्कूलों के इरादे ही ख़तरनाक हैं, वो तालीम व तरबियत की आड़ में इन मासूम बच्चों को इस्लाम ही से अलग करा रहे हैं। नयी भौतिक खोजों के अनुसार लेखक के व्यवहार का भी पाठको पर जब असर पड़ता है तो किसी गुरू के चरित्र का असर क्यों छात्र पर

नहीं पड़ेगा?इस्लाम की तरफ़ से नफ़से तालीम का विरोध नहीं है बल्कि उस्ताद का विरोध किया जा रहा है जिनकी नियतों में इस्लाम के सिलसिले में फ़ितूर और ख़राबी है। इस्लाम किसी भी इल्म या फ़न के हासिल करने का मुख़ालिफ़ नहीं है आज के इस उन्नति प्राप्त दौर में साइसं व टेक्नालाजी की शिक्षा इस्लाम को सही माने में समझने के लिये न सिर्फ़ जायज़ है बल्कि ज़रूरी हो गयी है। कुरआन की सैंकड़ो आयतों का संबंध आज की नयी खोजों से है। भौगोलिक ज्ञान व इतिहास के बग़ैर पिछली उम्मतों के हालात सही तौर पर समझे नहीं जा सकते। गणित के बग़ैर इस्लाम के अहम हिस्से विरासत की तक़सीम की जानकारी नहीं हो सकती है। अर्थव्यवस्था का ज्ञान तो कुरआन के ऐजाज़ को समझने के लिये ज़रूरी है। इस्लाम में नये पुराने का कोई बंटवारा नहीं। ये सब इल्म तो बहुत पुराने हैं। अब जब सिर्फ़ नाम बदल गये हैं तो हम इनका विरोध क्यों कर सकत हैं। इस्लाम उन ईसाईयों की गोद में अपनी औलाद को देने का विरोध करता है जो हमारे ईमान के दुश्मन हैं।

कुछ लोग ये भी कहते हैं कि हम तो घर में अलग से अपने बच्चों की दीनी तालीम का बन्दोबस्त करते हैं। उनकी नमाज़ों का ख़्याल रखते हैं, मस्जिद में कुरआन और दुआंए सीखने के लिये पाबन्दी से उन्हें भेजते हैं। ठीक है ..... आपने उसके ज़ाहिरी ईमान की निगरानी की, मुझे बताइये कि उनके दिल व अस्ली ईमान की आपके पास क्या ज़मानत है?नमाज़ों की पाबन्दी के बावजूद इस्लामी क़ानून पर उनको शक न होने का आपके पास क्या सुबूत है? इस्लाम के सिलसिले में उनकी तालीम के असर से बच्चे का दिल मुतमईन है, इसकी क्या गारंटी है?फिर क्या कारण था कि तसलीमा नसरीन के अब्बा आलिम थे, सलमान रुश्दी का घराना दीनदार था, जस्टिस हिदायत उल्लाह इस्लामी माहौल में पले बढ़े, अस्मत चुग़ताई ने एक दीनी घराने में आंखे खोलीं थीं, ख़्वाजा अहमद अब्बास का पूरा ख़ानदान दीनी एतबार से क़ाबिले रश्क़ था, हमीद दिलवाई, आरिफ़ मुहम्मद ख़ान, सिकन्दर बख़्त, और अब्बास नक़वी भी तो नमाज़ रोज़े के पाबन्द बताये जाते हैं लेकिन उनके मां–बाप और घरवालों की दीनदारी और इस्लाम पसंदी भी उन्हें उनके स्कूलों के नापाक और इस्लाम विरोधी असर से बचा नहीं सकी। जब हज़रत याकूब अलै0 ने अपनी औलाद को ईमान पर मरने की वसीयत व ताकीद की थी तो हम किस तरह कह सकते हैं कि दुश्मनों की गोद में पलकर भी हमारी औलाद दीन पर ही मरेगी?

इस वक़्त सबसे बड़ी ज़रूरत अपनी नस्लों में ईमान की हिफ़ाज़त के उपाय करने की है अब ज़बान से मुरतद होने वालों का ख़तरा तो कम हो गया है लेकिन ईमान ज़हनों से इस तरह रूख़्सत हो रहा है कि मां–बाप को इसका एहसास ही नहीं होता। अल्लाह से दुआ है कि मिल्लते इस्लामिया इस्लाम से फिर जाने के ख़तरे को महसूस करे और आने वाली नस्लों के ईमान की हिफ़ाज़त व उपाय करे। आमीन

**सांस्कृतिक हमला**

**वक़्त का सबसे बड़ा मसला "सांस्कृतिक हमला" और मीडिया का इस्तेमाल करके इस्लाम की छवि बिगाड़ने का है। पश्चिमी सभ्यता बल्कि अब मुश्रिकाना सभ्यता भी हमला करने की पोज़ीशन में है और मुसलमानों को माफ़ी मगांने पर मजबूर कर रही है। इसके लिये ज़रूरी है कि मुसलमान जो देश और शासन खो चुके हैं, लेकिन वही–ए–नबूवत के ज़रिये मिलने वाली उन सभ्यताओं और व्यवहारिक मूल्यों को किसी भी क़ीमत पर न नष्ट होने दें। हुकूमतों की हार से ज़्यादा बड़ा मसला सभ्यता, अक़ीदों, और श्रेष्ठ मूल्यों की हार है।**

**मसले की संगीनी इसलिये और बढ़ जाती है कि नयी सभ्यताओं से स्वयं मुसलमान इस प्रकार प्रभावित हो रहे हैं कि हम अमली ज़िन्दगी मे उन सभी मूल्यों को स्वीकार कर चुके हैं जो पश्चिम या शिर्क के केन्द्रों से आये हैं। शरीअत से गुरेज़, उसके हुक्मों पर अमल न करना और नयी सभ्यता के चकाचौंध से जो गंभीर समस्यांए पैदा हो रही हैं उनसे उम्मत का सही मार्गदर्शन करना उलमा का फ़र्ज़ है और जो मुश्किलें पैदा हो रही है, शरीअत के ढ़ांचे में रहकर उनको दूर करना हमारी ज़िम्मेदारी है।**

# जिहाद और आतंकवाद में अन्तर

हाफ़िज़ अब्दुलअज़ीम उमरी

जिहाद और आतंकवाद में पहला और आधारभूत अन्तर ये है कि जिहाद शुद्ध इस्लामी कर्तव्य और शरई हुक्म है जबकि आतंकवाद का इस्लाम से कोई संबंध नहीं। जिहाद के नियत व अमल का सही होना पहली शर्त है जबकि आतंकवाद इन सभी नियमों से स्वतन्त्र होता है। जिहाद केवल मुसलमान ही कर सकता है। मुसलमान ही मुजाहिद हो सकता है, जबकि आतंकवादी कोई भी हो सकता है, चाहे किसी भी धर्म से उसका संबंध हो। वो किसी भी देश का रहने वाला हो। किसी भी रंग व नस्ल का हो। आतंकवादी को न किसी धर्म विशेष से जोड़ा जा सकता है और न किसी देश से उसका संबंध जोड़ा जा सकता है। सच्चाई भी यही है आज लगभग दुनिया के हर देश में कुछ ऐसे विद्रोही गिरोह पाये जाते हैं जो उस देश के लिये लगातार सद का दर्द बने हुए हैं और उनके विद्रोह के दमन के लिये सरकार अपने बजट का एक बड़ा हिस्सा ख़र्च करती हैं। ख़ुद अमरीका को देश के अन्दर इस तरह के कई विद्रोहों का सामना करना पड़ता है। लेकिन ग़ौरतलब बात ये है कि इन सब विद्रोहों और विद्रोहियों को आतंकवाद व आतंकवादी की संज्ञा नहीं दी जाती किन्तु जहां कहीं किसी मामले में मुसलमान के होने के ख़बरें छपती हैं तो घटना को आतंकवाद का नाम और मुसलमान को आतंकवादी घोषित कर देने में अख़बारों को ज़रा भी देर नहीं लगती। मानो कि "आतंकवाद" और "आतंकवादी" की संज्ञाए एक योजनाबद्ध साज़िश के तहत केवल मुसलमानों के लिये बनायी गयी हैं।

दूसरा आधारभूत अन्तर ये है कि जिहाद कुछ नियमों का पाबन्द और कुछ शर्तों का मानने वाला होता है। जब तक कि ये शर्तें पूरी न हों तब तक जिहादी क़दम नहीं उठाया जा सकता है। जिहादी क़दम उठाने से पहले अहद व पैमान का भी बहुत लिहाज़ रखना पड़ता है।

"बजज़ उन मश्रिको के जिनसे तुम्हारा मुआहिदा हो चुका है और उन्होंने तुम्हें ज़रा भी नुक़सान नहीं पहुंचाया, न किसी की तुम्हारे ख़िलाफ़ मदद की तो तुम भी उनके मुआहिदे की मुद्दत उनके साथ पूरी करो।" (सूरह तौबा)

जिहाद के लिये अहवाल व ज़ुरूफ़ के साथ ज़मान व मकान की मुनासिबत व मलाइमत भी ज़रूरी होती हैः

"क्या तुमने उन्हें नहीं देखा जिन्हें हुक्म किया गया था कि अपने हाथों को रोके रखो और नमाज़ें पढ़ते रहो और ज़कात अदा करते रहो।" (सूरह निसा)

इसके विपरीत आतंकवाद सरासर बेउसूली, बेक़ायदगी, और मुतलकुल उनान का नाम है। यहां न अहदो पैमान का लिहाज़ रखा जाता है और न ही नियमों व उसूलों की पाबन्दी होती है। बस कुछ सरफिरे लोगों के जुनूनी जज़्बात होते हैं जिनके आगे न कोई क़ायदा व उसूल होता है और न ही कोई क़ानून उन्हें अपने क़ाबू में कर सकता है, वो तो बस अपनी ही सुनते और अपनी ही करते हैं।

तीसरा आधारभूत अन्तर ये है कि जिहाद सामूहिकता का अभियाचक है बल्कि सामूहिकता के बग़ैर जिहाद का विचार नहीं किया जा सकता है, इस्लाम और मुसलमानों के दुश्मनों से जिहाद करना ये मुस्लिम हुकूमत और उस समय के शासक की ज़िम्मेदारी होती है, जिसके अधीन सारी जनता होती है। इसी के अधीन होकर आम्मतुल मुस्लिमीन दुश्मन से जंग करते हैं। हाकिम स्वयं जिहाद में न भी जाये तो उसकी सरपरस्ती तो मुजाहिदीन को प्राप्त रहती है। इसी अर्थ में हाकिम को ढ़ाल से तश्बीह देते हुए हदीस में फ़रमाया गया हैः (इमाम तो एक ढाल है जिसकी आड़ में दुश्मन से लड़ा जाता है और उसके हमलों से बचा जाता है)

इसके विपरीत व्यक्तिगतता व बिखराव आतंकवाद का एक आवश्यक तत्व है। आतंकवादी किसी भी समाज का ऐसा हिस्सा होते हैं जिनकी धारा समाज की धारा के विपरीत और जिनकी सोच समाज के आम लोगों की सोच से अलग होती है। वो न अपने ऊपर किसी हाकिम के अधिपत्य को स्वीकार कर सकते हैं और न ही उन्हें जनता का समर्थन प्राप्त होता है। जो भी क़दम वो उठाते है उसके ज़िम्मेदार वो ख़ुद होते हैं और उन कुछ लोगों के कारण सारे समाज को ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है।

एक और महत्वपूर्ण अन्तर ये भी है कि जिहाद नेक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये होता है और उन लोगों के साथ हुआ करता है जिन्हें सच में क़त्ल कर देना

चाहिये। जिहाद करते समय मुजाहिदीन के सामने मुसलमानों के जायज़ और वाजिब अधिकारों की प्राप्ति, "आला कलिमतुल्लाहि", एहक़ाक़े हक़, अल्लाह की रज़ा और जन्नत की प्राप्ति की तमन्ना जैसे बुलन्द और नेक उद्देश्य होते हैं जबकि आतंकवाद इन सभी नेक विचारों से ख़ाली होता है। आतंकवाद का उद्देश्य फ़ित्ना–फ़साद फैलाना, समाज की शांति भंग करना, अपने नाजायज़ मांगों को मनवाने के लिये जोर व जबर की राह अपनाना, देश की उन्नति में रुकावट बनना इत्यादि होते हैं। यानि आतंकवाद में आरम्भ से अन्त तक अन्याय होता है, जबकि जिहाद सरासर न्याय का नाम है। जिहाद ज़ुल्म के ख़ात्मे और न्याय व इन्साफ़ की स्थापना के लिये होता है।

"और अल्लाह के रास्ते में उन लोगों से क़िताल करो जो तुमसे लड़ते हैं और ज़्यादती न करो।" (सूरह बक़रा)

जबकि आतंकवाद सरासर अन्याय का नाम है। इसी लिये जिहाद में सिर्फ़ उन लोगों को निशाना बनाया जाता है जो इस्लामी दृष्टिकोण से, सच्चाई की राह में रुकावट बनते हैं, इस्लाम के ख़िलाफ़ साज़िश करते हैं, मुसलमानों के ख़ून के प्यासे होते हैं और इस्लाम की दावत की राह में रोड़े अटकाते हैं या ख़ुद आगे बढ़कर मुसलमानों पर हमला करते हैं। जिहाद में बेगुनाहों को निशाना नहीं बनाया जाता। बच्चों, बूढ़ों, और औरतों को पूरी तरह सुरक्षित रखा जाता है। एक जंग में आप स0अ0 ने एक औरत को मरा हुआ पाया तो ये कह कर औरतों को क़त्ल करने से मना किया।

इसके विपरीत आतंकवाद का निशाना बेगुनाह और मासूम लोग बनते हैं। ज्यादातर ये होता है कि आतंकवादियों को सरकार ये शिकायत होती है या राजनेताओं से दुश्मनी होती है मगर जब उनसे बदला लेने की कोई राह नहीं बचती है तो रेलवे स्टेशनो, बस स्टैन्डों, बाज़ारों, आम रास्तों पर या बड़ी–बड़ी इमारतों में विस्फ़ोट करके अपने बदले की आग बुझाते हैं। इस तरह सैंकड़ो बेगुनाह मर्दों, औरतों और बच्चों का ख़ून नाहक़ बहता है। मुजरिम कोई और होता है और सज़ा किसी और को मिलती है।

जिहाद और आतंकवाद में एक अन्तर ये भी होता है कि दोनों को अगर परिणाम के अनुसार देखा जाये तो जिहाद से हमेशा उम्मत की समस्यांए हल होती हैं जबकि आतंकवाद से और समस्यांए जन्म लेती हैं। जिहाद में सकारात्मक परिणाम निकलना लाज़मी बात है। दुश्मन ज़ेर होता है। इस्लामी दावत के रास्ते की रूकावटें दूर होती हैं, इस्लामी उन्नति की राह आसान होती है और इस्लाम का बोलबाला होता है। यदि जिहाद में मुसलमान वक़्ती तौर पर पराजित भी हो जायें तो ये परायज भविष्य की विजयों का पेश खेमा साबित होती है।

आतंकवाद से कभी समाज की समस्यांए हल नहीं होती हैं बल्कि हमेशा आतंकवाद नित नयी समस्याओं को जन्म देता है। संक्षेप में ये कि जिहाद एक पवित्र इस्लामी कर्तव्य है जो बहुत सी शर्तों और नियमों का पाबन्द है जबकि आतंकवाद हर प्रकार की पाबन्दियों से स्वतन्त्र होता है जिसका इस्लाम से किसी प्रकार का संबंध नहीं होता।

जिहाद को आतंकवाद का नाम देना भी ग़लत है और जिहाद के नाम पर आतंकवाद करना भी बहुत ग़लत है।

## शेष : यनिफ़ार्म सिविल कोड

तो अगर पर्सनल लॉ की समानता कौमी एकता और विभिन्न वर्गों के बीच समानता को बढ़ावा देने मे प्रभावित होती तो मानवता का इतिहास आज कुछ और ही होता।

क़ौमी एकता और विभिन्न वर्गों के बीच समानता का एक बेहतरीन नुस्ख़ा दो वर्गों के मध्य शादी को कहा जाता है लेकिन ये दावा करते समय ये भुला दिया जाता है कि आये दिन ऐसी शादियों के टूटने और खानदान के बिखरने के वाक़्ये समाज मे प्रकट हो रहे हैं। इसके अलावा इस बात को भी भुला दिया जाता है कि इस नुस्ख़े पर एक ऐसी शख़्सियत ने अमल किया था जिसे फ़िरक़ा परस्ती की अलामत और देश की एकता को समाप्त करने वाला और देश के बंटवारे का ज़िम्मेदार घोषित कर दिया जाता है। मिस्टर मुहम्मद अली जिनाह ने एक पारसी घराने मे शादी की थी और स्पेशल मैरिज ऐक्ट के तहत की थी, मगर इससे क़ौमी एकता को कितना बढ़ावा मिला उसे सब जानते हैं। इसलिए एकसमान नागरिक कानून को लागू करने की कोशिश मानो देश की सबसे बड़े अल्पसंख्यक की धार्मिक स्वतन्त्रता पर कैद है जिसका आवश्यक परिणाम न केवल देश की सलामती बल्कि उसके भविष्य के लिये भी ख़तरा है।

# निकाह के अनिवार्य रजिस्ट्रेशन का उपाय

## मुस्लिम पर्सनल लॉ में दख़ल देने का प्रयास

मौलवी नदीम वाजिदी

निकाह दो इन्सानों का ज़ाती मामला है और इसकी सेहत के लिये दोनों की रज़ामन्दी शर्त है। उन्हीं को ईजाब व कुबूल भी करना है। मगर बहुत से वजहो से इसे कुछ देर के लिये व्यक्ति की ज़ात से अलग करके अवामी और सामूहिक बनाया गया है और इसे शासन की बेजा दखल से भी अलग रखा गया है। जब तक ये शरीअत की तय की गयी ख़ुतूत के मुताबिक अन्जाम पाये। किसी भी ग़ैर सरकारी या अर्द्ध सरकारी एजेंसी को इसमें दखल देने की इजाज़त नहीं दी गयी।

हमारी राज्य व केन्द्र सरकारें अक्सर इस तरह के शोशे छोड़ती रहती हैं, जिनसे देश में यूनिफ़ार्म सिविल कोड के लागू हो और मुस्लिम पर्सनल लॉ में दख़ल देने की राह आसान हो सके। देश के संविधान ने मुसलमानों को इस्लामी क़ानूने निकाह, तलाक़, विरासत, वक्फ़ और हिबा वग़ैरह पर अमल करने का पाबन्द बनाया है और किसी को भी ये हक़ नहीं दिया कि वो इन क़ानूनों में दख़ल दे। मुसलमान बार बार अपने इस हक़ के लिये क़ानून में दी गयी छूट का हवाला देकर इस तरह की दख़लअन्दाज़ी न करने की मांग कर चुके हैं। इसके बावजूद कोई न कोई अदालत या कमीशन ऐसे उपाय पेश कर देता है, जिससे मुसलमान परेशान हो जाते हैं। ऐसा ही एक उपाय ये है कि देश के सभी नागरिकों कों निकाह के रजिस्ट्रेशन का पाबन्द बनाया जाये।

1981 ई0 में उत्तर प्रदेश सरकार ने केन्द्र सरकार से मांग की थी कि वो शादी ब्याह के अनिवार्य रजिस्ट्रेशन के लिये क़ानून का निर्माण किया जाये। मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड और दूसरी संस्थाओं के सख़्त विरोध के बाद केन्द्र सरकार ने राज्य सरकार की मांग ठुकरा दी और इस प्रकार ये मामला कुछ सालों के लिये दबा रहा। 1990 में पश्चिम बंगाल की सरकार ने इस बारे में एक क़दम आगे बढ़ाते हुए निकाह के अनिवार्य रजिस्ट्रेशन के क़ानून का प्रारूप तैयार किया और इस संसद सत्र में प्रस्तुत करने का इरादा किया। इस मौक़े पर भी मिल्ली संस्थाओं और मुस्लिम लीडरों ने अपनी ज़िम्मेदारी महसूस की और इसकी कड़ी निंदा की। पश्चिम बंगाल की सरकार उस समय तो पीछे हट गयी, लेकिन बाद में उस बिल को क़ानून की शक्ल दे दी गयी जबकि उस पर अभी तक अमल नहीं किया जा सका है। 2002 में आंध्र प्रदेश की सरकार ने इस प्रकार का बिल असेम्बली में मन्ज़ूर भी कर लिया, लेकिन मुसलमानों के कड़े विरोध के कारण ये बिल अभी तक गवर्नर के हस्ताक्षर के इन्तिज़ार में पड़ा है।

पिछले कुछ बर्सों में बहुत बार सुप्रीम कोर्ट के कई जज भारत सरकार को ये राय दे चुके हैं कि निकाह के अनिवार्य रजिस्ट्रेशन का क़ानून बनाया जाना चाहिये। अभी हाल ही में दिल्ली सरकार ने शादी के अनिवार्य रजिस्ट्रेशन के सिलसिले में एक हुक्म नामा जारी करने का ऐलान किया है। दिल्ली सरकार के रेवन्यू सेक्रेट्ररी धर्म पाल ने कहा है कि शादी के रजिस्ट्रेशन का प्रारूप अगले हफ़्ते तक जारी कर दिया जायेगा और ये दिल्ली में होने वाली सभी शादियों पर लागू होगा। इसमें हर धर्म व ज़ात की दूल्हा–दुल्हन, जिनकी उम्र 21/18 को पहुंच चुकी हो, अपनी शादी का रजिस्ट्रेशन करांएगे। ये एक लाज़िमी काम होगा, न करने पर हज़ार रूप्ये का जुर्माना भी लगाया जायेगा। दिल्ली हुकूमत का रेवन्यू डिपाट्रमेंट बहुत जल्द एक निज़ाम क़ायम करने जा रहा है ताकि रजिस्ट्रेशन कराने वालों को किसी परेशानी का सामना न करना पड़े। इसमें एक इमरजेन्सी सर्विस भी शुरू की जा रही है, जिसके तहत दस हज़ार रूप्ये अदा करके तरजीही बुनियादों पर शादी का रजिस्ट्रेशन कराया जा सकेगा।

इस पूरे परिदृश्य में ये सवाल बड़ा महत्वपूर्ण है कि आख़िर हमारे नेता, क़ानून दां और अदालतों को इस तरह के क़ानून से इस क़दर दिलचस्पी क्यों है?जिस देश में

अभी तक जन्म व मृत्यु के सही अनुपात का रिकार्ड न हो सका हो, जो देश की सामाजिक उन्नति के लिये हानिकारक है, जिस देश में वोटरों की सही पहचान न की जा सकती हो, जो संसदीय धर्मनिरपेक्षता की स्थिरता के लिये आवश्यक है, जिस देश में अभी तक बेराज़गारो और बिना पढ़े–लिखे लोगों की सही संख्यां न मालूम हो, जिसके बग़ैर देश को विकसित बनाने का विचार भी नहीं किया जा सकता है, उस देश में निकाह के रजिस्ट्रेशन पर इतना ज़ोर क्यों दिया जा रहा है?इससे देश को या देश की जनता को कौन सा राजनीतिक या सामाजिक लाभ होने वाला है?आम ख़्याल ये है कि उस उपाय पर अमल के द्वारा सरकार यूनिफ़ार्म सिविल कोड को लागू करने की राह आसान करेगी। देखने में निकाह का अनिवार्य रजिस्ट्रेशन का यूनिफ़ार्म सिविल कोड से कोई संबंध नज़र नहीं आता है, मगर इसके पीछे जो इरादे छिपे हैं उनको नज़रअन्दाज़ नहीं किया जा सकता है। इसे आंकड़े रखने के सरकारी प्रयास में देखना सही नहीं है। ये एक लम्बी योजना का हिस्सा है, जिस पर अमल करके मुसलमानों की प्रतिक्रिया का निरीक्षण करने का प्रयास किया जायेगा।

यहां ये बात भी साफ़ कर देनी चाहिये कि निकाह के लिये लाज़मी रज़िस्ट्रेशन का कोई विचार इस्लाम में मौजूद नहीं है, बल्कि ये व्यक्ति का ज़ाती हक़ है कि वो चाहे तो ज़बानी ईजाब कुबूल कर सकता है और चाहे तो निकाह को तहरीर की शक्ल भी दे सकता है। इस क़ानून को अगर मुसलमानों की तरफ़ से बिला चूं–चंरा के स्वीकार कर लिया जाता है तो कल सरकार को दूसरे कानूनों को बनाने का हौसला मिलेगा। लॉ कमीशन ने स्पेशल मैरिज एक्ट और यूनिफ़ार्म शरीअत कोड के क्रम में जो उपाय प्रस्तुत किये हैं, उनको अमली शक्ल देने की कोशिश की जायेगी।

मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड ने रजिस्ट्रेशन को अनिवार्य करने का ये कह कर विरोध किया है कि देश के लगभग 75 प्रतिशत मुसलमान जो देहात में रहते हैं उन्हें इस क़ानून का पूरी तरह इल्म नहीं होगा और वो अपनी अज्ञानता के कारण इस पर पूरी तरह अमल नहीं कर पायेंगे। नतीजा ये होगा कि उनके ख़िलाफ़ मुक़द्दमे किये जायेंगे और वो परेशानियों में पड़ जायेंगे।

ये व्यवस्था वहां तो कामयाब हो सकती है, जहां एक ही जगह पर सारी सुविधांए मिलती हों, जहां नौकरशाही और अफ़सर शाही रिश्वत से पाक हो और जहां की सरकार अपने लोगों की मदद में लगी रहती हो। हमारा देश आज़ादी के साठ साल बाद भी इस योग्य नहीं बन सका है, इसके लिये हमारी सरकार को ज़रूरी सुविधांए देनी होंगी।

मुसलमानों को चाहिये कि वो ख़ुद रजिस्ट्रेशन कराने के बारे में ध्यान दें। हर जगह इस प्रकार के लोग हैं जो निकाह पढ़ात हैं और लिख भी देते हैं। ये निकाह नामा सरकारी संस्थाओं, अदालतों, दूतावासों में स्वीकार्य है और उन्हें सुबूत के तौर पर स्वीकार किया जाता है।

## सफलता–असफलता

उन्नीसवीं सदी के मशहूर अंग्रेज़ लेखक "सैमुअल बटलर" ने लिखा है:

"ज़िन्दगी उस फ़न का नाम है कि नाकाफ़ी मुक़द्दमात से काफ़ी नताएज निकाले जायें।"

सैमुअल ने ये बात फ़ितरी तौर पर कही है मगर ज़िन्दगी के बारे मे शरीअत ने जो तसव्वुर दिया है वो भी बिल्कुल यही है। क़ुरआन में बताया गया है कि इस दुनिया में अल्लाह तआला ने जो निज़ाम बनाया है, उसमें आसानी के साथ मुश्किल लगी हुई है। आप स०अ० ने एक बार पहाड़ी रास्ते को देखा जिसका नाम लोगों ने "दुश्वार" रखा था। आप स०अ० ने फ़रमायाः नहीं इसका नाम तो आसान है। मानो इस्लाम की तालीम ये है कि आदमी मुश्किल में आसानी ढूंढे।

आप स०अ० की ज़िन्दगी इस तालीम की आला मिलाल है। आपको सख़्त मुश्किलें पेश आयीं, मगर आपने हिकमत से उनको अपने हक़ में बना लिया। इस सिलसिले में एक मुस्तशरिक़ मिस्टर कैलेट ने लिखा है कि, "आपने मुश्किलों का सामना इस ग़रज़ के साथ किया कि नामाकी से कामयाबी को निचोड़ दें।"

दुनिया में एक तरफ़ इन्सान है जो दूसरों के लिये मुश्किलें पैदा करता है, दूसरी तरफ़ अल्लाह का निज़ाम है जिसने हर मुश्किल के साथ उसका हल भी रख दिया है। ऐसी हालत में इन्सानी मुश्किलों पर शोर करना ये माने रखता है कि आदमी ने इन्सान के अमल को देखा मगर वो अल्लाह के अमल को न देख सका। क्योंकि अगर वो अल्लाह के अमल को देखता तो शिकायत करने के बजाय वो इसको इस्तेमाल करने में लग जाता।

इस दुनिया में हर नाकामी के बाद एक नयी कामयाबी का इम्कान आदमी के लिये बाक़ी रहता है। ज़रूरत सिर्फ़ इस बात की है कि आदमी इस इम्कान को इस्तेमाल करके दोबारा अपनेआप को कामयाब बना ले।

# मुस्लिम नेतृत्व का अकाल

## जनाब फ़य्याज़ कुरैशी

किसी भी क़ौम का भविष्य उसके अपने मार्गदर्शकों के नेतृत्व के अनुसार प्रकाशमान होता है या फिर अंधकारमय। आज अगर इस देश में मुसलमानों का भविष्य अंधेरे में नज़र आता है तो प्रभावशाली नेतृत्व अवश्य एक महत्वपूर्ण कारण है। कोई भी क़ौम सरकार के विरुद्ध अपने ग़म व गुस्से को प्रकट करके अपनी समस्यांए हल नहीं कर सकती, यद्यपि अपने लिये और अधिक समस्यांए अवश्य पैदा कर लेती है।

जब किसी इन्सान के दिल पर पर्दा पड़ता है तो एक माहिर डॉक्टर इलाज शुरू करने से पहले उन कारणों की जांच करता है जिसकी वजह से दिल का दौरा पड़ा है। ऐसा कहीं नहीं होता कि डॉक्टर ऐसे मरीज़ के दिल की तरफ़ ध्यान देने के बजाय दूसरी शिकायतों पर ध्यान दे। किन्तु हमारे नेता मुस्लिम समाज के लिये उस डॉक्टर की तरह हो गये हैं जिसने दिल का दौरा पड़े हुए मरीज़ के दिल को भूलकर दूसरी शिकायतों पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रखा हो। इस समय देश में मुस्लिम समाज के अस्तित्व को ही ख़तरा है। मगर हमारे नेतृत्वकर्ता हैं कि, "इधर रोम जल रहा है, उधर चीन की बांसुरी बजायी जा रही है" की कहावत बने अपनेआप में मस्त हैं। मुस्लिम राजनेताओं की सबसे बड़ी कमी ये है कि वो चाहे किसी भी पार्टी में हो, जब तक कि उस पार्टी में अपने लिये कोई स्थान नहीं बना लेते, वो मुसलमानों की भलाई, अधिकार व रक्षा की बात बहुत ही ज़ोर–शोर के साथ करते रहते हैं। ज्यों ही उस पार्टी में उन्हें कोई पद प्राप्त हो जाता है वो मुसलमानों के प्रतिनिधी से कहीं ज़्यादा पार्टी के प्रतिनिधी बन जाते हैं और कभी–कभी ऐसे दिल को दुखा देने वाले बयान देते हैं जिससे मुसलमानों की भावनाओं को ही नहीं उनके दीन को भी ठेस पहुंचती है। ऐसे मुस्लिम नेतृत्व के हाथों भारत में मुसलमानों की इज़्ज़त व आबरू और उनके अधिकारों की रक्षा ऐसी ही है जैसे बकरियों की सुरक्षा भेड़ियों के हाथों में दे दी जाये। अतीत के अनुभव गवाह हैं कि इस देश में मुसलमानों पर बहुत ज़्यादतियां हुईं। धार्मिक पवित्रता पर आंच आयी, धार्मिक स्थल व प्रतीक चिन्ह ढाये गये, अब भी किसी न किसी हवाले से आये दिन कुछ न कुछ होता रहता है (ये अलग बात है कि आंशिक रूप से इसके ज़िम्मेदार हम स्वयं भी हैं) किन्तु मुस्लिम राजनेताओं के कानों पर जूं तक नहीं रेंगती पार्टी या अपने पद से इस्तीफ़ा देना तो दूर की बात इसके विपरीत पार्टी और अपने पद के प्रति वफ़ादारी के ऐसे सुबूत दिये गये कि पार्टी उनकी "धर्मनिरपेक्षता" से प्रभावित हुए बग़ैर नहीं रह सकी। आज भारत में धर्मनिरपेक्ष मुसलमान का अर्थ यही रह गया है कि वो इस्लाम से परे हो, शरीअत पर उंगली उठाए और समय आने पर मुसलमानों की समस्याओं के संबंध में चुप्पी साध कर अपने आक़ाओं को खुश करे और अपने पद की रक्षा करे। सही बात तो ये है कि मुस्लिम नेतृत्व देश व क़ौम के लिये हर क्षेत्र में बुरी तरह नाकाम हो चुका है। इस बदतरीन सूरते हाल से मुसलमान किस तरह निपटे?ये मुस्लिम समाज के लिये एक बहुत बड़ा चैलेंज है।

मुस्लिम नेतृत्व की नाकामी का सुबूत इस बात से भी मिलता है कि अरबों रूपये की वक़्फ़ जायदाद ग़ैरों के क़ब्ज़े में चली गयी या विवादित है। जो बची–खुची है उस पर ख़ुद हमारे भाई क़ब्ज़ा किये हुए बैठे हैं या उस जायदाद का सामूहिक रूप से ग़लत प्रयोग हो रहा है। जिसके कारण क़ौम का निर्माणी काम न होने के बराबर है।

अब रही मुसलमानों के लिये धार्मिक मार्गदर्शन की बात। तो यहां की हालत भी कुछ अलग नहीं है। धार्मिक मार्गदर्शन ने इस्लाम को आम तौर पर आपसी खींचतान का साधन बना लिया है। मसलक और मकतब–ए–फ़िक्र से संबंधित ऐसे हालात पैदा कर दिये जाते हैं कि आम मुसलमानों के लिये ये मुश्किल हो जाता है कि इस्लाम क्या है और उसकी मांग क्या है?

मुस्लिम नेतृत्व की नाकामी का सुबूत ये भी है कि अदालती फ़ैसले अपने हक़ में होने के बावजूद आज भी हज़ारों मासूम और बेगुनाह मुसलमान टाडा और उस जैसे सख़्त क़ानूनों के अन्तर्गत जेलों में बन्द हैं और दूसरी तरफ़ हज़ारों बेगुनाह मुसलमान बहुत से ग़लत फ़ैसलों में फसे हैं मगर उनकी मदद तो दूर की बात है, उसका एहसास तक हमारे नेतृत्वकर्ताओं को नहीं। होना तो चाहिये था कि गुजरात जैसी इबरतनाक घटना के बाद हमारे नेताओं की आंखे खुल जातीं, हम भी संभल जाते, मगर हमारे काहिली को क्या कहिये वो इतनी सख़्त जान

है कि टूटने का नाम ही नही लेती।

मुस्लिम नृेतत्व का सबसे बड़ा कुसूर बल्कि जुर्म ये है कि उसने देश की आज़ादी के बाद मुसलमान बच्चों और बच्चियों को जो कि इस देश में मुसलमानों की पूंजी है और उसका भविष्य हैं, अधिकांश भूल गये जिसकी वजह से मुसलमानों की नस्ल दर नस्ल तबाह हो गयी। नतीजा ये हुआ कि मुसलमानों के अन्दर ग़ुरबत, जिहालत और बेरोज़गारी अपने उरूज को पहुंच गयी। मुसलमानों की ख़स्ताहाली और कमज़ोर मुस्लिम नेतृत्व का लाभ देश के फ़िरक़ापरस्तों ने ख़ूब उठाया। अब हालत ये है कि मुसलमान जो कल तक शिक्षा के क्षेत्र में देश की पिछड़ी हुई क़ौमों से दस गुना पीछे थे, आज उनकी पस्ती के बारे में सोचना भी मुश्किल है। मुस्लिम बच्चों की थोड़ी बहुत संख्यां जो शिक्षा प्राप्त कर रही है उनमें भी अधिकांश अयोग्य, ग़ैरज़िम्मेदार और मिल्लत के दर्द से ख़ाली शिक्षकों के हाथों बर्बाद हो रही है और जो बच्चे अच्छी शिक्षा के शौक़ में ईसाई स्कूलों में पनाह ले रहे हैं वो न केवल इस्लामी सभ्यता से कोरे हो रहे हैं बल्कि दीन बेज़ार बन रहे हैं। इस बदतरीन सूरते हाल से निपटे बग़ैर मुस्लिम नेतृत्व इस देश में मुसलमानों का कोई भला नहीं कर सकती है।

आज़ादी के बाद अब तक हम इस देश में बहुत कुछ झेलते आ रहे हैं। अब तो हमें होश के नाख़ून लेना ही चाहिये। अतीत में हुई अपनी ग़लतियों की क्षतिपूर्ति करनी है। याद रहे कि इस देश में मुसलमानों को पस्ती से बाहर निकालने और उनकी पसमान्दगी को दूर करने, साथ ही इस देश की उन्नति प्राप्त क़ौमों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने के लिये उन्हें उन क़ौमों से कई गुना ज़्यादा मेहनत करनी होगी। लेकिन शुक्र है कि मुसलमानों के पास अल्लाह का दिया हुआ बहुत कुछ बाक़ी है। वो इस देश में पस्त होने के बावजूद पस्त हौसला और पस्त हिम्मत नहीं हैं। दीन व मिल्लत की ख़ातिर कड़ी से कड़ी मेहनत और बड़ी से बड़ी क़ुर्बानी देने को हमेशा तैया रहते हैं। अगर मक़सद नेक हो तो उसको पाने के लिये अपना सब कुछ लुटाने और मिटाने का जज़्बा भी रखते हैं। आज भी ये वक़्त के तूफ़ान से टकरा जाने का हौसला रखते हैं। बात सिर्फ़ इतनी है कि उनको हौसलों और वलवलों को लोगों की जिलाबख़्शी जाये, बल्कि इन्हें सही रुख़ पर मोड़ा जाये। उनसे वो काम लिया जाये जो काम दूसरे विश्वयुद्ध के बाद जापान ने अपनी क़ौम से लिया था। दूसरे विश्वयुद्ध में पूरी तरह से तबाह होने के बाद जापान ने प्राइमरी और सेकेन्डरी एजूकेशन पर अपना ध्यान केन्द्रित किया मानो पूरा जापान शिक्षण संस्थाओं में परिवर्तित हो गया और शिक्षकों की तनख़्वाहें और सुविधांए मंत्रियों के बराबर कर दी गयीं, नतीजा ये हुआ कि सिर्फ़ चालिस साल के अन्दर एक नया और दुनिया का विकसित जापान अस्तित्व में आया।

क़ौमों की मनोवैज्ञानिक विशेषता ये रही है कि धर्मनिरपेक्ष व्यवस्था में जो क़ौम जितनी कमज़ोर रहती है वो उस क़दर झुका दी जाती है, जा क़ौम उठ खड़ी होती है दुनिया उसके आगे झुक जाती है। आज समय की बहुत बड़ी मांग है हमारा नेतृत्व अपने लाभों से ऊपर उठ कर देश के हमदर्द और बुद्धिजीवियों को अपने साथ लेकर, आज के समय की मशहूर वाक्य "थिंक टैंक" तैयार करें। इसे मज़बूत बनांए और उससे राय मश्वरे लेते हुए राष्ट्रीय स्तर पर मुसलमानों के लिये कम से कम पन्द्रह से बीस सालों पर आधारित योजना पर नफ़रतों, अदावतों और कुदूरतों से पाक एक कार्यप्रणाली तैयार करें, जिसमें मुस्लिम बच्चों की शिक्षा व प्रशिक्षण और उनकी सेहत की हिफ़ाज़त को प्रथम वरीयता दें।

आज ये काम हमें हिमालय पर चढ़ाई करने जैसा लगता है। मगर हर सूरत में हमें इस कठिन सफ़र को अपनाना ही है। देर ही से सही यक़ीनन हम चोटी पर पहुंचेगे और इस देश में अपनी कामयाबी के झन्डे लहराकर एक ज़बरदस्त और बावक़ार क़ौम बनकर फिर उभरेंगे। हमें ये काम कर दिखाना है, इससे हौसला पाकर इस देश के मुसलमानों को एक क्रान्तिकारी समाज में ढालना है, दूसरी स्थिति में इस देश में एक बाइज़्ज़त ज़िन्दगी गुज़ारने के लिये हमारी तमामतर कोशिशें दलदल में फंसकर हाथ पैर मारने के अलावा कुछ न होंगी।

किसी भी क़ौम में बिखरा हुआ नेतृत्व अच्छे परिणाम पैदा नहीं करता। बिखराव उसे पतन की ओर अग्रसर कर देता है। कुरआन ने मुसलमानों को साफ़ शब्दों में चेताया है कि "अगर तुम एक नहीं रहोगे तो तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी" अब भी वक़्त है कि संभल जाये और सारे मुसलमानों को संभाले। इसके लिये ज़रूरी है कि मुस्लिम क़यादत इस्लाम के बुनियादों तक़ाज़ों और उसूलों पर पूरी उतरे और मुसलमान एक होकर समस्याओं को सफलता पूर्वक हल करने की कोशिश करें।

# यूनिफ़ार्म सिविल कोड

# UNIFORM CIVIL CODE

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

"एकसमान नागरिक कानून" (Uniform Civil Code) से मुराद वो समाजी और पारिवारिक कानून हैं जो किसी भी विशेष भू भाग पर आबाद लोगों के लिए बनाए गयें हों। उन कानूनों मे हर व्यक्ति के निजी और ख़ानदानी मामले भी शामिल हैं। इन कानूनों को लागू करने में किसी व्यक्ति के धर्म या सभ्यता या रस्म व रिवाज का ख्याल नही किया जाता बल्कि इन चीज़ों से बिल्कुल अलग होकर धर्म के मानने वालों को एक समान नागरिक कानून (Uniform Civil Code) का पाबन्द होने पर मजबूर किया जाता है। जिसके अन्तर्गत वो सारे कार्य आ जाते हैं जिनका संबंध पर्सनल लॉ से होता है।

भारत मे एकसमान नागरिक क़ानून के लागू करने का मतलब हर धर्म के मानने वालों को और विशेषतः मुसलमानों को अपने पर्सनल लॉ को छोड़ देना है, और ऐसे कानूनों का पाबन्द होना है जो पश्चिमी सोच के ढ़ांचे में ढ़लकर तैयार हुआ हो और जिसे "हिन्दु कोड" के नाम से जाना जाता है। क्योंकि जब शासन के लिए इसको लागू करना आसान होगा तो वो वर्तमान हिन्दुकोड को ही एकसमान नागरिक कानून का नाम दे देगी जिसका आधार वास्तव में हिन्दु धर्म की शिक्षा नही अपितु पश्चिमी दृष्टिकोण हैं।

एकसमान नागरिक कानून के द्वारा मुसलमानों के क़ौमी पहचान और दीनी पहचान को समाप्त करने की एक कोशिश है। स्पेशल मैरिज ऐक्ट (Special Marriage Act) और इण्डियन सेक्शन ऐक्ट (Indian Section Act) के द्वारा इसको अच्छी तरह समझा जा सकता है। इसके अन्तर्गत सर्वधर्म शादियां हो सकतीं हैं। मैरिज ऐक्ट के तहत शादी करने वाले विरासत के अधिकार से वंचित रहेंगे। इसी प्रकार शादी के तीन साल बाद तक मियां बीवी में अलगाव की कोई सम्भावना नही। तलाक़ का हक़ केवल मर्द को नही बल्कि मर्द और औरत में से जो भी तलाक़ लेना चाहे तो वो अदालत का दरवाज़ा खटखटाकर वो अपनी मांग को सही साबित करके अलग हो सकता है।

इसी प्रकार इण्डियन सेक्शन ऐक्ट की पहली दफ़ा के अनुसार हर व्यक्ति को वसीयत करने का अधिकार प्राप्त है। वो चाहे जिसके लिए वसीयत करे और चाहे जितनी मात्रा के लिए करे, इसके अतिरिक्त मरने वाले की मां, बीवी और बेटा और बेटी सबको समान अधिकार दिया जाएगा। ये और इस तरह के बहुत से क़ानून हैं जो मुस्लिम पर्सनल लॉ के बिल्कुल विपरीत हैं। इसलिए एकसमान नागरिक क़ानून का मतलब मुसलमानों के पर्सनल लॉ में सीधे दख़ल देना है। और इन क़ानूनों के कुबूल करने की मांग करना न केवल ये कि धार्मिक स्वतन्त्रता पर रोक है बल्कि अक़ीदा व ज़मीर की आज़ादी से भी वंचित करने का विचार है। और वास्तव में देश के वास्तविक गणतन्त्र को बिगाड़ने और धर्मनिरपेक्ष चरित्र को बिगाड़ने की एक नापाक साज़िश है।

एक लम्बे समय से देश का एक वर्ग जिसमें बड़ी संख्या हिन्दुओं की है और कुछ मुसलमानों की इसे लागू करने के लिए जेहन बनाने की पूरी कोशिश कर रहा है। कुछ लोग ताकत के जोर पर इसे लागू करने का मश्वरा देते हैं, कुछ इस्लाह के नाम पर इसको लागू करने में आसानी पैदा कर रहे हैं। और कुछ हालात का तकाज़ा बताकर इसको लागू करने की सिफ़ारिश कर रहे हैं। ये वो लोग हैं जिनका ज़मीर व ख़मीर पश्चिमी विचार मे ढला हुआ है। पश्चिम से अलग होकर न उनके पास कोई दावत है, न कोई संदेश है, और न कोई शिक्षा। जिस प्रकार वहां धर्म को एक प्राइवेट (Private) मामला समझ लिया गया है और उसकी दायरा इबादतों और कुछ रस्मों तक महदूद कर दिया गया है। इसी प्रकार भारत में भी एकसमान नागरिक क़ानून को लागू करके पूरी आबादी को पश्चिमी धारे मे बहाने का प्रयास किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त एकसमान नागरिक कानून की सिफ़ारिश का एक आधारभूत कारण इस देश का वो महत्वपूर्ण कानून है जो 1954ई0 और 1956ई0 के बीच स्वीकृत किया गया, जिसके परिणाम मे हिन्दु पर्सनल लॉ समाप्त हुआ और उसकी जगह और उसकी जगह पश्चिम से लिया गया पर्सनल लॉ लागू किया गया। उस समय ये फ़िज़ा बनाई गयी कि जिस प्रकार हिन्दु पर्सनल लॉ समाप्त किया गया है उसी प्रकार मुस्लिम पर्सनल लॉ भी समाप्त किया जाए। आइये इस सिलसिले मे दी गयी दलीलों का एक सरसरी निरीक्षण करते है:

(1) भारतीय दण्ड सहिंता की धारा 44 की मांग है कि

शासन ये प्रयास करे कि देश मे एकसमान नागरिक कानून लागू हो:

"The state shall endeavour to secure for citizens a uniform civil code throughout the territory of India."

लेकिन जिस प्रकार धारा 44 की ये मांग है कि देश मे एकसमान नागरिक कानून लागू हो उसी प्रकार धारा 25 कहती है कि देश के हर व्यक्ति को किसी भी धर्म के स्वीकारने, उस पर कार्यरत होने और उसके प्रचार करने का पूरा अधिकार प्राप्त है।

"Subjects to public order, morality and health and to the other provisions of this part, all persons are equally entitled to the freedom of conscience and the right freely to profess, practice and propagate religion."

ये धारा आम नागरिक के "मौलिक अधिकार" से संबंधित है जबकि धारा 44 का संबंध "मार्गदर्शक नियम" से है। और ध्यान रहे कि "मौलिक अधिकार" की धारांए "मार्गदर्शक नियम" से अधिक महत्वपूर्ण हैं। अतः धर्म की स्वतन्त्रता के साथ एकसमान नागरिक कानून का लागू होना किसी भी दशा मे सम्भव नहीं है।

(2) भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है इसके लिए आवश्यक है कि यहां के कानून धार्मिक पाबन्दियों से स्वतन्त्र हों।

बिना किसी शक भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है लेकिन धर्मनिरपेक्षता का अर्थ ये नही है कि देश से धार्मिक स्वतन्त्रता और समाज से धार्मिक रीति रिवाजों को हटा दिया जाए। बल्कि इसका अर्थ ये है कि शासन का न कोई धर्म होगा और न वो किसी धर्म की तरफ़दारी करेगा और न ही किसी के साथ किसी धर्म के मानने या न मानने के कारण से कोई पक्षपात किया जाएगा। धर्मनिरपेक्षता का सही अर्थ यही है और इसी अर्थ के अन्तर्गत देश के कानून बनाए गये हैं। इसके बाद ये सवाल ही नही उठता कि "एकसमान नागरिक अधिकार" धर्मनिरपेक्षता की आवश्यकता हैं।

(3) धार्मिक कानून पुराने हो चुके हैं, अब वो जमाने की आवश्यकताओं का साथ नही दे सकते हैं।

ये सही है कि धार्मिक कानून पुराने हैं लेकिन इसका ये मतलब नही है कि वो बेकार व व्यर्थ हैं, और उनक लाभ खत्म हो चुका है। कोई चीज़ केवल पुरानी होने की वजह से बेकार नही होती और न हर नई चीज़ इसलिए अच्छी हो सकती है कि वो नई है। बल्कि उसकी हक़ीक़त और उसके लाभ का इन्साफ़ के साथ जाएज़ा लिया जाना चाहिए। ये देखना चाहिए कि उसके कानून समाज को सन्तोषजनक आधार पर स्थिर रखने और उन्नति देने की योग्यता रखते हैं कि नही? इसी तरह उन कानूनों का भी निरीक्षण किया जाना चाहिए जो "नये कानून" के नाम से पेश किये जा रहे हैं और ये वास्तविकता है कि "एकसमान नागरिक अधिकार" का आधार पश्चिम के पर्सनल और निजी कानून हैं। इसलिए पहले आवश्यक है कि जिन क़ानून को भारत मे लागू करने की जद्दोजहद की जा रही है उसका निरीक्षण उन देशों मे किया जाए जहां वो लागू हैं। और ये बात जगजाहिर है कि पश्चिम की समाजी और पारिवारिक ज़िन्दगी की तीलियां टूट टूट कर बिखर रही हैं। और व्यक्तिगत जीवन का सुकून व विश्वास विदा हो चुका है। वहां पर किसी व्यक्ति का अपने वैवाहिक जीवन सफल होना किसी हैरतअन्गेज़ कारनामे से कम नहीं।

इसके अतिरिक्त धार्मिक कानून के दो भाग हैं एक भाग आधारभूत और नियमित है जिसमें किसी प्रकार के बदलाव की संभावना नही है। और दूसरा भाग वो है जो समय की आवश्यकताओं के अनुसार बदलता रहता है। अतः ये कहना कि धर्म समय की आवश्यकताओं को पूरा नही कर सकता सर्वथा व्यर्थ है। (4) देश मे क़ौमी एकता को बढ़ाने और एकता को मज़बूत बुनियादों पर स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि देश मे एकसमान नागरिक कानून लागू किये जांए, क्योंकि विभिन्न प्रकार के व्यक्तिगत कानून बिखराव का ज़रिया बनते हैं।

क़ौमी एकता का नारा अवश्य आकर्षक है लेकिन ये समझना कि एकसमान नागरिक कानून के द्वारा इसके लिए राह आसान हो सकती हैं केवल एक ग़लतफ़हमी है। क्योंकि अगर पारिवारिक कानून की समानता ही क़ौमी एकता पैदा कर सकती तो पंजाब प्रदेश मे सिख और हिन्दु एक लम्बे समय तक आपस मे झगड़ते न रहते। आसाम मे खून न बहता रहता। बंगाल मे मानवता की धज्जियां न उड़ाई जाती और बंग्लादेश नक़्शे पर न आता। ब्रिटेन और जर्मनी में खून की नदियां न बहतीं, और दो "विश्व युद्ध" से मानवता का दामन तार तार न होता। जबकि इन देशों की पारिवाकिरक व्यवस्था एक बल्कि उनका धर्म भी एक है।

(शेष : पृष्ठ 12 पर )

## औरतों के लिए इरशाद-ए-नबवी

हज़0 अबू हुरैरा रज़ि0 फ़रमाते हैं कि रसूलल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया कि "अगर औरत पांचों नमाज़े पढ़े, फ़र्ज़ रोज़े रखे, अपनी इज़्ज़त की हिफ़ाज़त करे, अपने शौहर की इताअत करे तो उससे कहा जाएगाः जिस दरवाज़े से चाहो जन्नत में दाख़िल हो जाओ।"

हज़0 अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 आप स0अ0 से रिवायत करते हैं कि "दुनिया की हैसियत सामान की है, और उसमें सबसे अच्छा सामान नेक बीवी है।"

हज़0 उम्मे सलमा रज़ि0 रसूलल्लाह स0अ0 के हवाले से फ़रमाती हैं कि "जो बीवी इस हाल में दुनिया से जाए कि उसका शौहर उससे ख़ुश था वो जन्नत में दाख़िल होगी।"

हज़0 अनस रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलल्लाह स0अ0 से रिवायत करते हैं कि "बेहतरीन औरत वो है जो अपने शौहर को ख़ुश कर दे जब वो उसे देखे, उसकी इताअत करे जब वो उसे हुक्म दे, अपनी ज़ात में और अपने माल में शौहर को नापसन्द कोई काम न करे।"

हज़0 अबूबक्र रज़ि0 से रिवायत है कि ..... किसरा की हलाकत के बाद आप स0अ0 ने पूछाः "लोगों ने किसको किसरा का जानशीन बनाया? बताया गयाः उसकी बेटी को। फ़रमाया "हरगिज़ वो क़ौम कामयाब नही हो सकती जिसने अपने मामलों की बाग़डोर किसी औरत के हाथ में दे दी।"

हज़0 अबू मूसा आप स0अ0 का इरशाद नक़ल फ़रमाते हैं : "हर आंख ज़िना करती है, जो औरत इत्र लगाकर (मर्दों की) महफ़िल से गुज़रती है वो ज़िनाकार है।"

मैमूना बिन्त साद रज़ि0 रिवायत नक़ल करती हैं कि "जो औरत ख़ुशबु की नुमाइश के साथ घर से निकलती है और मर्दों की निगाह उस पर पड़ती है वो बराबर अल्लाह की नाराज़गी में घिरी रहती है जब तक कि घर न लौटे।"

हज़ इब्न मसऊद रिवायत नक़ल करते हैं कि "(मामूली बात पर शौहरों से नाराज़ होकर) ख़ुला लेने वाली, और बेपर्दा बाहर निकलने वाली औरतें मुनाफ़िक़ हैं।"

हज़0 अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 फ़रमाते हैं कि रसूलल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः आंगन में नमाज़ पढ़ने के मुकाबले में औरत का अपने घर के अन्दर नमाज़ पढ़ना ज़्यादा बेहतर है, और घर (के आम कमरों) में नमाज़ पढ़ने के मुकाबले औरत का अपने कमरे में नमाज़ पढ़ना ज्यादा बेहतर है।"

उमरा बिन्त अब्दुर्रहमान रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलल्लाह स0अ0 की रफ़ीक़–ए–हयात हज़रत आयशा रज़ि ने फ़रमायाः "औरतों ने जो हाल किया है अगर अल्लाह के रसूल स0अ0 देख लेते तो उनको उसी तरह मस्जिद में दाख़िल होने से रोकते जिस तरह बनी इस्राईल की औरतों को रोक दिया गया था।"

मोहम्मद समआन ख़लीफ़ा नदवी

## चार अहम सवाल

१९९५ ई० की बात है। क़ाहिरा की मजलिस में "फ़ैसल एवार्ड" पाये हुए लोगों को विचार प्रकट करने का मौक़ा दिया गया। उनमें बोस्निया के रा ट्रपति अली इज़्ज़त बेगूच भी थे। उन्होंने अपने मक़ाले के आख़िर में कहा कि मेरे ज़हन में चार सवाल हैं, मैं चाहता हूं कि जो इनका तसल्ली बख़्श जवाब दे दे उसे इस्लामी ख़िदमत का फ़ैसल एवार्ड मिलेः

पहला सवाल ये है कि उम्मते मुस्लिमा जिसे अल्लाह तआला ने पहली वही में "इक़रा" का दर्स दिया है उस वही को नाज़िल हुए आज लगभग चौदह सौ बरस हो गये हैं, इसके बावजूद इस उम्मत के ज़्यादातर लोग अनपढ़ क्यों हैं?

दूसरा सवाल ये है कि इस्लाम में वक़्त की पाबन्दी पर बड़ा ज़ोर दिया गया है, जैसे नमाज़ का वक़्त तय है, रोज़े का महीना तय है, ज़कात का वक़्त मुकरर्र है, हज की तारीख़ मुक़रर्र है, लेकिन दुनिया में वक़्त को सबसे ज़्यादा मुसलमान ही ख़राब ही करते हैं, क्यों? वक़्त की पाबन्दी के लिये उनकी ग़फ़लत का ये आलम है कि कुछ साल पहले "रिबात" में "इस्लामी तन्ज़ीम" की एक चोटी कान्फ़्रेंस हुई, जिसमें मुस्लिम देशों के बादशाह, रा ट्रपति इत्यादि भी शामिल थे, ये कान्फ़्रेंस ६ घन्टे देर से शुरू हुई!!!

तीसरा सवाल ये कि इस्लाम ने पाकी को आधा ईमान बताया है उसकी हर इबादत पाकी और सफ़ाई-सुथराई से जुड़ी है, मगर क्या बात है कि सामूहिक रूप से मुसलमान सफ़ाई के मामले में सबसे पीछे है?

आख़िरी सवाल ये कि इस्लाम में तौहीद के बाद इत्तेहाद को बड़ी अहमियत हासिल है, मगर क्या वजह है कि उम्मते मुस्लिमा सबसे ज़्यादा इख़्तिलाफ़ व इन्तिशार का शिकार है???

# ये है फ़िलिस्तीन!

**अबुल अब्बास ख़ाँ**

बहता हुआ ख़ून–तड़पती हुई लाशे–लुटी हुई इज़्ज़ते–बिखरे हुए अंग–बिलकते हुए बच्चे–सिसकते हुए बूढ़े–जले हुए मकानात–ज़मीन में धंसी हुई इमारतें–बारूद की चादरें–गोलियों की बौछार–तोपों की घन–गरज–मिसाइलों के धमाके–चीख़–पुकार–आहें व सिसकियां–आंसुओं में डूबा हुआ मुल्क–जी हां ये है फ़िलिस्तीन!!

यहूदी क़ौम–खुदा के बाग़ी–अम्बिया के क़ातिल–धितकारी क़ौम–दर बदर भटकती क़ौम–अय्यार व मक्कार क़ौम–साज़िशी क़ौम–ताक़त में हो तो ज़ुल्म करे–कमज़ोर हो तो तलवे चाटे– जंगी जराएम करने वाली–इन्सानियत इससे नालां–शैतान इस पर फ़रहां–यूरोप इससे परेशां–अमरीका इससे आजिज़–किसी मुल्क में इसका ठिकाना नहीं–कोई मुल्क इसके नाम नहीं–कोई भौगोलिक अस्तित्व नहीं–यूरोप सोचता रहा–अमरीका फ़िक्रमन्द रहा–साज़िशें रची गयीं–स्कीमें बनायी गयीं–नक़्शा तैयार हुआ–फ़िलिस्तीन को चुना गया–और वजूद में आया इस्राईल।

इस्राईल–हथियारों से मुसलह–टेक्नालॉजी से लैस–न्यूकिलियाई ताक़त में चूर–दौलत की रेल–पेल–यूरोप इसका हामी–अमरीका इसका पुश्तपनाह–आलमे इस्लाम बेपरवाह–ताक़ते आज़माई गयीं–मीसाइल बरसाये गये–तोप दाग़े गये–जवानों को क़ैद किया गया–औरतों को बेइज़्ज़त किया गया–नाका बन्दी कर दी गयी–वह ख़ून चूसता रहा–तवाना होता रहा–रक़्बा फैलता गया–आबादी बढ़ती गयी–फ़िलिस्तीन सिकुड़ता गया–दुनिया से रिश्ता काट दिया गया–मुल्की हैसियत छीन ली गयी–एक मज़लूम मुल्क–इन्सानी हुकूक़ से महरूम मुल्क–अपनी सरज़मीन पर–अपने वजूद को ढूंढता हुआ मुल्क–जी हां ये है फ़िलिस्तीन!!

ग़ुलामी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ–मज़लूमियत के शिकंजे में जकड़ा हुआ–घरों से बेघर–जाएदाद से महरूम–न फ़िज़ा में उड़ने की आज़ादी–न ज़मीन पर फिरने की इजाज़त–दुनिया का सबसे बड़ा क़ैदख़ाना–दुनिया की सबसे मज़लूम क़ौम–जी हां ये है फ़िलिस्तीन!! दुनिया उसे मुल्क नहीं मानती–लेकिन इन्सान तो मानती है? शायद नहीं!

तिब्बी सहूलत से महरूम–न अस्पताल महफ़ूज़–न डॉक्टर मौजूद–दवाओं की क़िल्लत–ज़ख़्मियों की बहुतात–बच्चे भी–बूढ़े भी–कटे हुए बाज़ू–फटे हुए सर–झूलते हुए अंग–किसी का ख़ून नहीं रुकता–किसी का दर्द नहीं थमता–किसी को होश नहीं आता–किसी की जान नहीं निकलती–चारों तरफ़ ज़ख़्मी ही ज़ख़्मी–सीना पीटती औरतें–डॉक्टर को ढूंढती नज़रें–दवाओं के लिये भटकते अइज़्ज़ा–कफ़न के लिये दौड़ते अहबाब–बुनियादी ज़रूरतों का मोहताज–जी हां ये है फ़िलिस्तीन!!

बच्चों का स्कूल–कच्ची–पक्की इमारतें–खेल का मैदान–फटी पुरानी किताबें–छोटे–छोटे मासूम बच्चे–कुछ खेल रहे–कुछ पढ़ रहें–असातज़ह कम है–लेकिन हैं–बड़ी–बड़ी डिग्रियां नहीं–कोई महारत नहीं–कोई कमाल नहीं–लेकिन इन्सानियत से लबरेज़–इन्सानियत के दायी–इन्सानियत के मुदर्रिस–घर का सा माहौल–कोई पराया नहीं–कोई बेगाना नहीं–निगाहों में चमक है–हौसला है–कुछ करने का–मुस्तक़बिल संवारने का–लेकिन आह–रॉकेट ने उसे भी निशाना बना डाला–पूरा स्कूल भक से हो गया–सारे ख़्वाब झुलस गये–न इमारत बची–न खेल का मैदान–खन्डर ही खन्डर–ख़ून ही ख़ून–दम तोड़ते बच्चे–बारूद में खोया हुआ स्कूल–जी हां ये है फ़िलिस्तीन!!

दुनिया तमाशाई–ताक़तें ख़ामोश–यू एन ओ बेबस–आलमे इस्लाम बेबस–न मदद की अपील–न नुसरत के बोल–न हमदर्दी का इज़हार–लाशें गिर रहीं–इन्सानियत मर रही–मुल्क तबाह हो रहा–क़यामत–ए–सुग़रा का मन्ज़र–लेकिन मुस्लिम हुक्मरां–मीटिंगो में मसरूफ़–बयानात पे ख़ुश–दाद व ऐश में शादां–अमरीकी नवाज़िश से निहाल–ग़ुलाम हैं ये हुक्मरां–क़ैद है आलमे इस्लाम–सिर्फ़ एक मुल्क है आज़ाद– जी हां ये है फ़िलिस्तीन!!

कोहे अज़्म व इस्तक़लाल–साबित क़दमी की चट्टान–जवांमर्दी की मिसाल–सब्र व ज़ब्त के निशान–मज़बूत दिल–सख़्त जान–जरी व बेबाक–अवामी जज़्बात का मरकज़–उनकी दुआओं में शामिल–निगाहों से दूर–दिल के क़रीब– जी हां ये है फ़िलिस्तीन!!

# कुरआन मजीद के आदाब

ऐसे मुबारक कलाम को पढ़ने के लिये पूरे अदब व लिहाज़ की ज़रूरत है। वो ऐसा कलाम नहीं है कि बेतवज्जोही और बेदिली से पढ़ा जाये। न वो ऐसी किताब है कि जिस तरह चाहे उठा लिया, जिस तरह चाहे पढ़ लिया, इसके लिये ज़बान की पाकी और दिल की पाकी चाहिये।

ख़ुद अल्लाह तआला का इरशाद है:

"इसको पाक लोग ही हाथ लगांए" (सूरह वाक़्या)

बेअदबी और बेतवज्जोही इन्सान को नेमत और उसकी बरकत से महरूम कर देती है।

हज़रत अकरमा रज़ि० का वाक़्या है कि वह जब कुरआन शरीफ़ खोलते तो ख़ुदा के ख़ौफ़ से बेहोश हो जाते और ज़बान पर "ये मेरे रब का कलाम है" "ये मेरे रब का कलाम है"। यही वो अज़मत थी जिसने सहाबा किराम रज़ि० को सबसे ज़्यादा बुलन्द मक़ाम दिया था। जब वो कुरआन शरीफ़ पढ़ते तो ख़ुद उनकी ज़िन्दगी में तब्दीली आ जाती है और सुनने वाले बेख़ुद हो जाते। हज़रत अबूबकर सिद्दीक़ रज़ि० जब अपने घर के अहाते में कुरआन शरीफ़ की तिलावत करते तो कुफ़्फ़ार मक्का की औरतें और बच्चे घेरा डालकर खड़े हो जाते और सुन–सुन कर बेख़ुद होने लगते और कुरआन शरीफ़ की तिलावत सख़्त से सख़्त दिल को मोह लेती और सोज़ व गुदाज़ से दिल भर जाते और आखें नम हो जातीं। इसकी असर अंगेज़ी के बेशुमार वाक़्यात हैं कि कुरआन की आयत सुनने के बाद कितने काफ़िर मुसलमान हो गये। वो असर आज भी है लेकिन अगर पढ़ने वाला उन आदाब और हुक़ूक़ का लिहाज़ रखे जो कुरआन करीम के हैं।

मशाएख़ और उलमा ने कुरआन करीम के कुछ ज़ाहिरी और कुछ बातिनी आदाब लिखे हैं:

१– इन्तिहाई एहतराम के साथ बावज़ू और क़िब्ला रू होकर पढ़े।

२– जल्दी न पढ़ें , तरतील और तजवीद से पढ़ें।

३– रोने की सई करें चाहे तकलीफ़ से हो।

४– आयत–ए–रहमत पर दुआए मग़फ़िरत व रहमत करें और आयते अज़ाब व वईद पर ख़ुदा की पनाह मांगे और आयते तन्ज़िया व तक़दीस पर सुब्हानल्लाहि कहें।

५– दिखावा लग रहा हो या किसी मुसलमान की तकलीफ़ का ख़्याल हो तो धीमें पढ़े।

६– ख़ुश इल्हानी से तिलावत करें।

---

मौलाना मुहमद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

VOLUME:06

AUGUST 2014

ISSUE:08

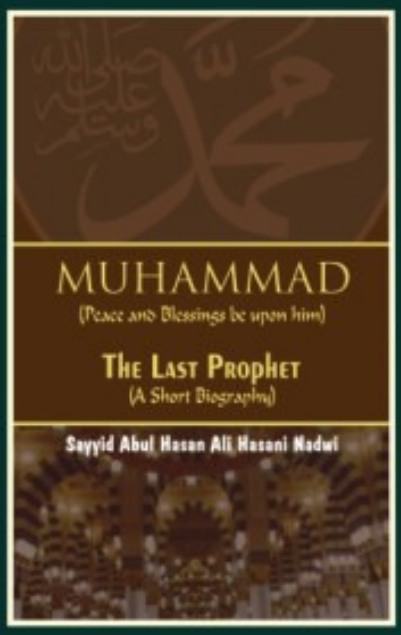

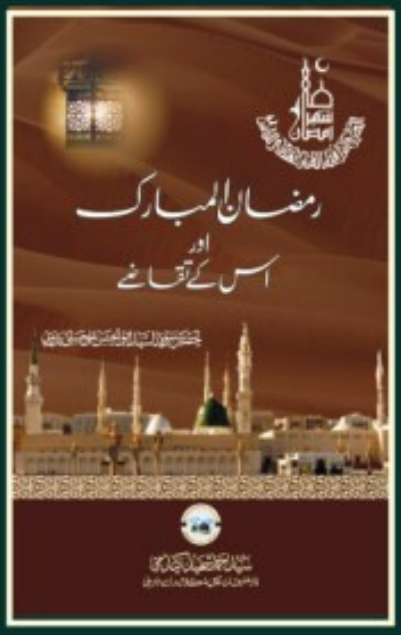

**Sayyid Ahmad Shaheed Academy (Contact: 9919331295)**

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi

**MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI**

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile: 9918385097, 9918818558
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.